कुरुक्षेत्र

जनवरी 1998

मूल्य : पांच रुपये

बलिदान की अर्धशती पर विशेष

गांधीजी प्रासंगिक हैं, रहेंगे

बापू के प्रति...

डा. स. भानुमति

जब वह विदा हुआ था
इस संसार से
उसने तब भी दिया संदेश
सत्य और अहिंसा का।

वह तो पी गया गरल हिंसा का
और हुआ प्रतिष्ठित अन्तर्मन में अजर-अमर
तुम भी उठ चलो ऊपर जाति और वर्ण से
भूगोल और इतिहास से
धर्म और सम्प्रदाय के व्याकरण और व्यापार से।

संसार शस्त्रों से नहीं, होता है नष्ट
कुत्सित भावनाओं से
इसी कारण होती है
सृजन पर ध्वंस की लीला विकट।

मानवता के इतिहास का यही अभिशाप है
हिंसा कायर और अविवेकियों का आलाप है
स्वीकारो आज चुनौती है सामने तुम्हारे
वेदना और रोष में भी विवेक कभी न हारे।

सत्य की ऐनक लगाकर
अहिंसा की छड़ी उठाकर
एकता की पादुकाओं से चलकर
विश्व समुदाय का करो पथ प्रदर्शन
यही तो है बापू का जीवन-दर्शन
यही तो है भारत की संस्कृति और
मानव-मूल्यों का संरक्षण।। □

कुरुक्षेत्र

ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय
की प्रमुख मासिक पत्रिका

वर्ष 43 | अंक 3 | पौष-माघ 1919 | जनवरी 1998

कार्यकारी संपादक
बलदेव सिंह मदान

उप संपादक
रजनी

संपादकीय पता

संपादक, 'कुरुक्षेत्र', ग्रामीण क्षेत्र एवं रोजगार मंत्रालय,
कृषि भवन, नई दिल्ली-110001
फोन/फैक्स : 3015014

हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी में भी प्रकाशित इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों में अभिव्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं तथा यह आवश्यक नहीं कि सरकारी दृष्टिकोण भी यही हो।

संयुक्त निदेशक (उत्पादन)
डी० एन० गांधी

विज्ञापन प्रबंधक
के० एस० जगन्नाथ राव

व्यापार व्यवस्थापक
शकुन्तला

आवरण सज्जा
सलिल शैल

'कुरुक्षेत्र' की एजेन्सी लेने, ग्राहक बनने व अंक न मिलने की शिकायत, व्यापार व्यवस्थापक, प्रकाशन विभाग, सूचना और प्रसारण मंत्रालय पटियाला हाऊस, नई दिल्ली-110001 से करें। विज्ञापनों के लिए विज्ञापन प्रबंधक, प्रकाशन विभाग, ईस्ट ब्लाक-4, लेवल-7, रामकृष्णपुरम, नई दिल्ली-110066 से संपर्क करें। फोन : 6105590

इस अंक में

☐	गांधी प्रासंगिक हैं, रहेंगे	आशारानी व्होरा	3
☐	गांधी विचार संगति : अनंत और व्यापक	डा. के.डी. गंगराडे	7
☐	वर्तमान युग में गांधी जी के आर्थिक विचार	डा. इन्द्रदेव सिंह	9
☐	गांधी जी और ग्रामीण विकास	करुणेश प्रताप मिश्र	13
☐	साथ तो इन्हीं का दूंगी (कहानी)	कुलवन्त राजपूत	16
☐	आज के समय में गांधी जी की प्रासंगिकता	डा. दुर्गादास शर्मा	21
☐	लघु और कुटीर उद्योगों के बारे में गांधी जी के विचार	डा. बृज बहादुर सिंह	25
☐	ग्रामीण महिलाएं और पोषण	डा. उम्मेद सिंह इन्दा	27
☐	खो रहा है बचपन मजदूरी में	सत्यनारायण नाटे	28
☐	ग्रामीण औद्योगीकरण में खादी ग्रामोद्योग योजनाओं का महत्व	नरेश कुमार कादयान	31
☐	पर्यावरण और आर्थिक विकास	डा. राजनाथ	35
☐	निर्धनता दूर करने में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की भूमिका	बी. बी. मंसूरी	38
☐	कठोर जल और मानव स्वास्थ्य	डा. हिमांशु शेखर	40
☐	सस्ते और पौष्टिक सोया दूध से ग्रामीणों को रोजगार	डा. बृजनाथ सिंह	42
☐	भूलोक का अमृत : मट्ठा	डा. रामजीत शर्मा	43

एक प्रति : पांच रुपये | वार्षिक शुल्क : 50 रुपये

पाठकों के विचार

आर्थिक-सामाजिक क्षेत्र में भागीदारी का क्रियान्वयन हो

कुरुक्षेत्र के जुलाई 1997 अंक में *ग्रामीण-महिलायें : वैज्ञानिक दृष्टिकोण क्यों अपनाएं* कृति पढ़ी। सोच समयानुकुल लगी। सरकार, स्वयंसेवी संस्थाएं– महिला शिक्षा, महिला विकास कार्यक्रम और महिलाओं की आर्थिक, सामाजिक क्षेत्र में भागीदारी के वास्तविक क्रियान्वयन हेतु प्रभावी कदम उठायें, तो सफलता अवश्य मिल सकती है–महिला विकास, जागृति के क्रम में।

बी. आर. बंशीवाल, ग्राम सेवक प्रशिक्षण केन्द्र, मण्डोर, जोधपुर(राजस्थान)

महिलाओं के प्रति क्रूर व्यवहार क्यों

कुरुक्षेत्र का जुलाई 1997 अंक प्राप्त हुआ। सच में आनंद आ गया, बहुउपयोगी सामग्री पाकर। *बाल अपराध और कानून* लेख में बाल अपराधों का यथार्थपरक, सटीक तथा मनोवैज्ञानिक विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। *महिलाओं के प्रति बढ़ती हिंसा* यथार्थ में शोचनीय हालात का अंग है और क्या महिलाओं के प्रति ऐसा क्रूर व्यवहार हमारी सांस्कृतिक, नैतिक तथा सामाजिक क्षति का लक्षण नहीं है? कुपोषण का समग्र विश्लेषण भी प्रशंसनीय है।

प्रो. शरद नारायण खरे, शासकीय कन्या महाविद्यालय, मंडला (म. प्र.)

भूख की सजा : ग्रामीण जीवन के नैतिक मूल्यों की उदात्तता की प्रतीक

कुरुक्षेत्र का सितम्बर 1997 का अंक पढ़ा। अत्यन्त रोचक तथ्यों से भरपूर और ग्रामीण पृष्ठभूमि की झलक के दर्शन हुए। इसमें मुझे सबसे अधिक प्रभावित किया–करुणा श्रीवास्तव की कहानी *भूख की सजा* ने, जिसमें नारी के त्याग की बेजोड़ मिसाल है कि उसने अपने पति की अनुपस्थिति में परिवार के अन्य लोगों की रोटी के जुगाड़ के लिए कर्तव्य पालन करते हुए अपने कलेजे के टुकड़े को गिरवी रख दिया। यह शाश्वत सत्य है कि बड़े-बड़े कोठे भर जाते हैं लेकिन पेट में पाव भर की जगह का खड्डा कभी नहीं भरता। इसकी पूर्ति के लिए हाथ-पांव तो मारने पड़ते हैं, लेकिन कभी-कभी इस प्रकार के त्यागमय उदाहरण मन को झकझोर कर रख देते हैं तथा सोचने को विवश करते हैं कि इतनी गरीबी तथा विपन्नता के बावजूद ग्रामीण जीवन में नैतिक मूल्य, एक-दूसरे के प्रति आत्मीयता, त्याग तथा ईमानदारी जैसे गुणों की बहुमूल्य निधि आज भी कैसे विद्यमान है। ऐसी कहानियों तथा कविताओं की हम *कुरुक्षेत्र* से अपेक्षा रखते हैं।

मदनसिंह जाखड़, ग्राम पोस्ट गुड़ा मालानी, जिला बाड़मेर (राजस्थान)

समस्याओं के समाधान पर लेख महत्वपूर्ण लगे

कुरुक्षेत्र का जुलाई का अंक पढ़ा। भारत की समस्याओं के समाधान के लिए शासकीय योजनाओं पर आपने जो सूक्ष्म विवेचनात्मक लेख प्रकाशित किए हैं, उसका अध्ययन-चिन्तन में अत्यन्त महत्वपूर्ण भाग है। इसके उदाहरण हैं– *ग्रामीण बेरोजगारी : कारण और निवारण* (डा. मोहम्मद हारून), *बाल-अपराध और कानून : एक अवलोकन* (रवीन्द्र कुमार सिंह), *शिक्षा और साक्षरता* (प्रो. जी. लाल)। ये सभी आलेख चिन्तन का व्यावहारिक पक्ष हमारे लिए खोलते हैं।

महिलाओं के प्रति बढ़ती हिंसा (विजय कुमार) हमारी गुलाम मानसिकता का स्पष्टीकरण है। प्रजातन्त्र के पचास वर्ष हो जाने के बाद भी हम महिलाओं को अभी पूर्ण स्वतंत्रता नहीं दे पा रहे हैं। *ग्रामीण महिलाएं : वैज्ञानिक दृष्टिकोण क्यों अपनाएं* (ममता भारती) भी एक प्रेरक आलेख है।

सत्यनारायण भटनागर, 2 एस, आय. जी. देवरा, देवनारायण नगर, रतलाम (म. प्र.)

लघु कलेवर में समस्त ग्रामीण-नगरीय विशेषताएं

बहुआयामी पत्रिका *कुरुक्षेत्र* का मैं नियमित पाठक हूं। भूगोल विषय का असिस्टेंट प्रोफेसर होने के कारण मुझे राष्ट्र की समसामयिक योजनाओं, समस्याओं से रू-ब-रू होना पड़ता है। *कुरुक्षेत्र* एकमात्र ऐसी पत्रिका है जो एक साथ ग्रामीण तथा नगरीय भारत की समस्त विशेषताएं, औद्योगिक विकास, कृषिगत प्रगति और सार्वजनिक सेवाओं के विस्तार सहित समसामयिक पर्यावरणीय समस्याओं को अपने लघु कलेवर में समेटे रहती है। *कुरुक्षेत्र* का प्रत्येक अंक समाज विज्ञान के शोधार्थियों, समाजसेवियों और प्रतियोगी परीक्षाओं के लिए बेहद उपयोगी तथा संग्रहणीय होता है।

प्रो. अनिल कुमार सिन्हा, भूगोल विभाग, शास. स्वशासी महाविद्यालय, अम्बिकापुर (म.प्र.)

गांधी प्रासंगिक हैं, रहेंगे

आशारानी व्होरा

30 जनवरी 1948, महात्मा गांधी का बलिदान-दिवस। 30 जनवरी 1998 उनकी पचासवीं पुण्य तिथि है। 'आजादी का स्वर्ण जयंती वर्ष' और 'गांधी बलिदान की अर्धशती', दोनों कार्यक्रम साथ-साथ चल रहे हैं। इस अवसर पर राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की याद न आए, यह संभव नहीं। किन्तु गांधी जी को समय-समय पर औपचारिक रूप में तो हम याद करते ही हैं, जबकि सत्य यह है कि हम यह औपचारिकता निभाते हुए भी उन्हें लगभग भूलते जा रहे हैं।

अब, जबकि हम औद्योगिक विकास और तकनीकी प्रक्रिया अपनाते हुए उदारीकण और भूमंडलीकरण की ओर बढ़ आये हैं, तो प्रगति और विकास की विसंगतियां एक-एक करके हमारे सामने उजागर होती जा रही हैं। ऐसे समय गांधी, उनकी देन और उनके द्वारा स्थापित मूल्यों की प्रासंगिकता हमारे वैचारिक विमर्श की प्राथमिकता होनी चाहिए। प्रस्तुत लेख इसी प्रासंगिकता और विमर्श को समर्पित है।

प्रगति और विसंगति

इस बीच हमारे देश ने विभिन्न क्षेत्रों में प्रगति के मानदण्ड स्थापित किए हैं। विश्व के कुछ गिने-चुने औद्योगिक देशों में आज भारत की गिनती होने लगी है। समृद्धि बढ़ी है और शिक्षा स्तर भी बढ़ा है। पर इस सबके बावजूद, देश पर विदेशी कर्जा बढ़ा है। आयात भी बढ़ा, पर निर्यात उसके अनुपात में नहीं बढ़ पाया। कीमतें इतनी तेजी से बढ़ी हैं कि जनसंख्या का एक बड़ा भाग गरीबी की रेखा के नीचे रहकर जीने के लिए मजबूर है। एक ओर उपभोक्ता वस्तुओं से बाजार पटा पड़ा है, दूसरी ओर चीजों की कीमतें आम जनता की पहुंच से बाहर होती जा रही हैं। अनियंत्रित विकास की विसंगतियां मुंह बाये सामने खड़ी हैं। फलस्वरूप अमीर और अमीर होते गये हैं, गरीब और गरीब। यह सब देखकर लगता है, हमारी विकास-योजनाओं में कहीं कोई बड़ी खामी रही है। या फिर हम अपने उज्ज्वल पारंपरिक मूल्यों को भी बदलाव की भेंट चढ़ा गये हैं? हमने आधुनिकीकरण का अर्थ पश्चिमीकरण समझ लिया। उधार लेकर चलने को आर्थिक विकास मान लिया। गांधी जी के स्वदेशी भाव और आत्मनिर्भरता, ग्रामीण स्वायत्तता को उदारीकरण की भेंट चढ़ा दिया। स्वावलंबन को अन्तर्राष्ट्रीय मुद्रा कोष, विश्व बैंक या बहुराष्ट्रीय निगमों के पास गिरवी रख दिया।

गरीबी दूर करने के खूब नारे लगाये जाएं, अनेक कार्यक्रम चलाए जाएं और गरीबों की दशा में कोई सुधार न हो, तो इसे विडम्बना ही कहा जाएगा। एक ओर बढ़ती जनसंख्या इसके लिए जिम्मेदार है, दूसरी ओर विकास से आई समृद्धि के वितरण की खामी। पर समाज के हर क्षेत्र में बढ़ते भ्रष्टाचार के कारण गरीब-अमीर के बीच की खाई उत्तरोत्तर बढ़ती दिखाई दे, तो इसे क्या कहा जाए? विकास का असन्तुलन? या स्थिति में सुधार के लिए राजनीतिक, प्रशासनिक, सभी स्तरों पर इच्छाशक्ति का अभाव अथवा भ्रष्टाचार और निजी स्वार्थपरता से यथास्थिति स्वीकार?

यों सभी कारण मिले-जुले हैं। लेकिन इन सबके ऊपर है, मूल्य-ह्रास और सांस्कृतिक अवमूल्यन। पिछले कुछ समय से आकाशीय सांस्कृतिक आक्रमण से जैसे-जैसे यह अवमूल्यन बढ़ रहा है, हम अपनी पारम्परिक जीवन-शैली से कटते जा रहे हैं, अनियंत्रित भोग के साथ विकास की विसंगतियां भी अधिक उजागर हो रही हैं। इस सबके बीच कहीं से कोई आशा की किरण दिखाई देती है तो वह है गांधी जी की त्रिमुखी प्रेरणा—'स्वदेशी', 'स्वभाषा' और 'स्वावलंबन'। गांधी जी ने साधनों से अधिक साधनों की शुचिता पर बल दिया था। हम इधर शुचिता-निरपेक्ष, मूल्य-निरपेक्ष हो चले हैं तो गांधी के नाम की माला जपने से क्या होगा?

कथनी-करनी का भेद

आज हम भारत की स्वतंत्रता की स्वर्ण जयन्ती मना रहे हैं। प्रधानमंत्री श्री इन्द्र कुमार गुजराल ने 7 जुलाई 1997 को 'अखिल भारतीय स्वतंत्रता-सेनानी संगठन' के कार्यक्रम में कहा था, "हमने लोगों के साथ विश्वासघात किया है। गांधी जी का सपना था कि आजाद हिन्दुस्तान में हर आंख का आंसू पोंछा जाना चाहिए। पर आज भी अनेक आंखों में आंसू हैं। हर निगाह पूछती है कि पचास सालों में क्या हमने यही हिन्दुस्तान बनाया है? इस जगह पर बैठ कर मैं बहुत शर्मिन्दगी महसूस करता हूं। मिलने वाले लोग कहते हैं, मुझे कुछ मत दो, मेरी बात तो सुनो। इस देश का यही दुर्भाग्य है कि आज कोई किसी की बात नहीं सुनता।" श्री गुजराल के इस कथन में उनके अन्तर की पीड़ा साफ झलकती है।

इससे हमने आशा लगाई थी कि वे लाल किले की प्राचीर से प्रधानमंत्री के रूप में कुछ ऐसे ठोस समयबद्ध कार्यक्रमों की घोषणा करेंगे, ज़िनसे गरीब-अमीर के बीच की खाई पाटने, दीन-दुखियों के आंसू पोंछने और राष्ट्र की भाषा-संस्कृति के अवमूल्यन को रोकने का निश्चित आश्वासन हमें मिल सकेगा। हमारी कथनी-करनी के भेद की यह एक सच्चाई है—कहीं कम, कहीं ज्यादा। आज के माहौल में अनेक दबावों के बीच जीते हुए, प्रधानमंत्री के पद पर आसीन व्यक्ति भी वह सब नहीं कर सकता, जिसकी वह चाह रखता है। अतः दोष जब मुख्यतः वर्तमान व्यवस्था और वातावरण का ही है तो सुधार भी व्यवस्था में आमूल-चूल सुधार के बिना सम्भव नहीं होगा। सही दिशा पकड़ने के लिए कई बार प्रारम्भ से शुरू करना होता है, अन्यथा अपेक्षाएं पूरी नहीं होंगी और स्वतंत्रता अधूरी या खंडित मिलेगी। प्रश्न है कि प्रारम्भ कहां से हो? अर्थात बदलाव को मोड़ कहां से दिया जाए?

पिछले कुछ समय से आकाशीय सांस्कृतिक आक्रमण से जैसे-जैसे यह अवमूल्यन बढ़ रहा है, हम अपनी पारम्परिक जीवन-शैली से कटते जा रहे हैं, अनियंत्रित भोग के साथ विकास की विसंगतियां भी अधिक उजागर हो रही हैं। इस सबके बीच कहीं से कोई आशा की किरण दिखाई देती है तो वह हैं गांधी जी की त्रिमुखी प्रेरणा—'स्वदेशी', 'स्वभाषा' और 'स्वावलंबन'। गांधी ने साधनों से अधिक साधनों की शुचिता पर बल दिया था। हम इधर शुचिता-निरपेक्ष, मूल्य-निरपेक्ष हो चले हैं तो गांधी के नाम की माला जपने से क्या होगा?

बदलाव का अर्थ–अवमूल्यन नहीं

इस प्रश्न का उत्तर पाने के लिए हमें फिर गांधी जी की ओर देखना होगा। गांधी जी ने अपनी अंतिम इच्छा में चार प्रकार की स्वाधीनताओं का उल्लेख किया था—राजनीतिक स्वतंत्रता, आर्थिक स्वतंत्रता, सामाजिक स्वतंत्रता और नैतिक स्वतंत्रता। आर्थिक-सामाजिक-नैतिक बदलाव के बिना राजनैतिक स्वतंत्रता का क्या अर्थ है? इसके विस्तार में जाने की यहां गुंजाइश नहीं। हम गरीबी और बेरोजगारी की समस्या का रोना रोते हैं, लेकिन पूंजी कुछ ही हाथों में सिमटने दे रहे हैं। भारतीय अर्थ-व्यवस्था को विश्व बाजार से जोड़ने के प्रयत्नों से हमने आर्थिक प्रगति तो की, लेकिन इसका नतीजा क्या निकला? अमीर-गरीब के बीच की खाई और बढ़ गई। इस सामाजिक विसंगति को दूर करने के लिए ही सामाजिक-नैतिक स्वतंत्रता चाहिए जो मूल्यों की पुनर्स्थापना के बिना सम्भव नहीं।

पर मूल्यों की पुनर्स्थापना क्या अपसंस्कृति के आकाशीय आक्रमण को रोके बिना सम्भव है? दूरदर्शन अब केवल शहरी उपकरण नहीं, गांव-गांव, घर-घर में पहुंच रहा है तो इस उपभोक्तावादी संस्कृति और सांस्कृतिक अवमूल्यन को गांवों-कस्बों तक पहुंचने-फैलने से कैसे रोका जा सकता है? हमें सोचना होगा कि जहां, जिन क्षेत्रों में अभी भारतीय जीवन-शैली सुरक्षित बच रही है, वह कब तक बची रहेगी? क्या हम सालों-साल इस पर वाद-विवाद ही करते रहेंगे या कहीं से अपनी जड़ों की ओर लौटने की शुरुआत भी करेंगे? उल्टे हम भारतीयता की ओर लौटने के नाम पर जातिगत, सम्प्रदायगत, क्षेत्रगत हितों-मतभेदों को उभार कर अपनी कथित पहचान पाने के गलत रास्तों पर चल पड़े हैं, यह भूलकर कि पहचान पाने का अर्थ खण्डों में बंटना, विखण्डन को राह देना और राष्ट्रीय हितों को आघात पहुंचाना नहीं है।

विकेन्द्रीकरण की ओर

यह अकारण नहीं कि अपनी हत्या से केवल एक दिन पहले गांधी जी ने 'लोक राज्य' की अपनी परिकल्पना, उसकी पूरी रूपरेखा के साथ, अपनी वसीयत के रूप में छोड़ दी थी। जो लोग गांधी जी को आज के युग में अप्रासंगिक कहते नहीं थकते, उनके लिए नए समाजशास्त्रीय चिंतन-विश्लेषण से प्राप्त निष्कर्ष नई जानकारियों के रूप में उपस्थित हैं कि [illegible] की परिणति अधिकाधिक विकेन्द्रीकरण की ओर ही होने जा रही है। विकेन्द्रीकरण की यह नई प्रक्रिया सत्ता के अलावा आर्थिक-नीति, उद्योग, व्यवसाय, सेवाएं सभी क्षेत्रों में प्रारम्भ हो चुकी है। उद्योग, व्यवसाय में छोटी छोटी इकाइयां भी आज इतनी तकनीकी कुशलता और गुणवत्ता के साथ कार्यरत हैं कि बड़ी अंतर्राष्ट्रीय कंपनियों को भी अपने मुख्यालयों के प्रबंधन के अधिकारों का विकेन्द्रीकरण करने के लिए बाध्य होना पड़ रहा है। भारत में अंग्रेजी शिक्षा और पाश्चात्य जीवन-पद्धति में शिक्षित-प्रशिक्षित विशेषज्ञों की मांग आज विश्व बाजार में भले ही बढ़ी हो, उनकी संख्या दो-तीन प्रतिशत से अधिक नहीं है। देश के भीतर रोजगार के साधनों पर काबिज कथित संभ्रांत वर्ग के लोग भी 15-16 प्रतिशत ही हैं। शेष 80-82 प्रतिशत सामान्य तथा निम्न वर्गों में इस सामाजिक विसंगति के कारण जो रोष और आक्रोश पनप रहा है, वही समय-समय पर स्थानीय स्वायत्तता, अलग राज्य, आरक्षण और आरक्षण-विरोध आदि रूपों में अथवा निर्वाचित सरकारों को पलट देने के लिए तोड़-फोड़ की कार्यवाहियों में फूट रहा है। सामाजिक न्याय की मांग करने वाले इन असंतुष्ट लोगों का रोष कब, कहां ज्वालामुखी का रूप ले ले, कहा नहीं जा सकता।

लेकिन इसके पीछे विकेन्द्रीकरण की एक प्रक्रिया भी स्पष्ट दिखाई देगी जिसके लिए केन्द्र तथा राज्य से लेकर जनपद और पंचायत तक की राह हमें बनानी ही है। राह बन रही है, इसमें संदेह नहीं। किन्तु इस चार-स्तरीय शासन-प्रशासन को बनाने-बिगाड़ने, संगठित-विघटित करने की प्रक्रिया भी अब ऊपर से चलने वाली नहीं

है। गांधी जी के बताये रास्ते पर इसे नीचे से ही खड़ा करना या भंग करना होगा, क्योंकि 'लोक राज्य' की नकेल जनता के हाथ में होगी—आजादी के इतने वर्षों बाद 73वां संविधान संशोधन लाकर हमने इधर पंचायती राज व्यवस्था का मार्ग प्रशस्त किया है। यह अलग बात है कि जब तक इस विकेन्द्रीकरण की सहज स्वीकृति नहीं मिल पाती, जो सामाजिक प्रदूषण शहर से गांव तक फैल चुका है, तो वह सत्ता के लिए आपाधापी, गलाकाट प्रतियोगिता और राजनीति के अपराधीकरण के वर्तमान माहौल में भारत की आत्मा के कितना अनुकूल होगा, यह समय ही बताएगा। पर इन शंकाओं के बावजूद, नई सामाजिक व्यवस्था और नई वैश्विक व्यवस्था के लिए अन्य कोई विकल्प नहीं। यह व्यवस्था हिंसक मार्ग से, खून-खराबे से नहीं लाई जाए, गांधी जी के अहिंसक मार्ग से संभव बनाई जाए, यह युग की मांग है और यही मांग समूची मानवता के हित में है। ताजा उदाहरण—दक्षिण अफ्रीका के राष्ट्रपति पद पर नेल्सन मंडेला के आसीन होने और उन्हें सालों तक जेल में रखने वाले गोरे शासक के उनसे कमतर उपराष्ट्रपति पद पर आने के रूप में देखा जा सकता है, जिसकी पहले कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। सत्याग्रह के गांधी-मार्ग पर चलने वाली म्यांमार की जुझारू नेता आंग सान सू ची की रिहाई भी जनमत के दबाव से ही संभव हो पाई थी।

सामंजस्य और समन्वय नीति से वैश्विक व्यवस्था

पश्चिम का ईसाई धर्म संघबद्ध रहा। यहूदी और इस्लाम धर्म भी संघबद्ध धर्म हैं। इसलिए इनसे विकेन्द्रीकरण को प्रेरणा नहीं मिल पाएगी। भारत का वेदान्त दर्शन एक सनातन धर्म की परंपरा में विकसित हुआ। अतः वह संघबद्ध नहीं, साधनापरक सनातन धर्म है। किसी एक देवता, किसी एक धर्म-ग्रंथ, किसी एक उपासना-पद्धति पर आग्रह न होने से विकेन्द्रीकरण भारतीय परंपरा का सहज रूप रहा है। इसलिए कि शास्त्रार्थ के रूप में तर्क को स्थान देने के बावजूद, हमारा ऋषि-चिन्तन तर्क पर नहीं, प्रज्ञा पर आश्रित रहा। भारतीय जीवन-पद्धति पश्चिम की तर्क-आश्रित भौतिक, वैज्ञानिक सभ्यता के बजाय आध्यात्मिक, वैज्ञानिक दृष्टि पर आधारित रही। विकास के एक चरम पर पहुंचकर पश्चिमी जीवन-दृष्टि विकास की विसंगतियों, पर्यावरण-विनाश के दुष्परिणामों, मानव मन के सुख-संतोष में ह्रास की तनाव भरी और पूरे मानव जीवन के लिए विनाशकारी स्थितियों से गुजरकर फिर से भारतीय वेदान्त के तात्विक दर्शन की ओर उन्मुख है। इसलिए कि व्यावहारिक दृष्टि से यह अधिक मानवीय होने से, अधिक ग्राह्य होने से ही नई समाजशास्त्रीय खोजों का विषय था।

गांधी जी ने सभ्यता-प्रसार के हिंसात्मक साधनों की जगह सत्याग्रह, सविनय अवज्ञा जैसे अहिंसात्मक साधनों पर बल दिया। मशीन पर आधारित आर्थिक विकास की पश्चिमी परिकल्पना की जगह हाथ के श्रम, ग्रामीण कुटीर-उद्योगों, सादगी, कम जरूरतों पर आधारित स्वावलंबन तथा आत्मनिर्भर गांवों की परिकल्पना को मान्य किया। पश्चिमी सभ्यता की शक्ति की अवधारणा—'सरवाईवल आफ द फिटैस्ट' विकल्प में निर्बल के जिन्दा रहने के अधिकार को प्राथमिकता दी। इसी तरह केन्द्र-अभिमुख लोकतांत्रिक व्यवस्था के स्थान पर जन-अभिमुख लोकतांत्रिक व्यवस्था की वकालत की। नई सभ्यता की नई विकसित होती रूपरेखा की अब जो वकालत की जाने लगी है, वह गांधी जी की कल्पना से भिन्न नहीं है।

बेहतर समाज-रचना के लिए उपनिषदीय आह्वान

भारतीय उपनिषद का ऋषि, व्यावहारिक वेदांत पर चलने के लिए मनुष्य के भीतर की सुप्त शक्तियों को जगाना चाहता है—'उठो, जागो और श्रेष्ठ को प्राप्त करो।' यह श्रेष्ठ को प्राप्त करना ही उत्कृष्ट समाज की रचना करना है क्योंकि व्यक्तियों से ही समाज बनता है और समाज से ही राष्ट्र। अंततः विश्व-व्यवस्था भी तो राष्ट्रों पर आधारित होती है। यहां आकर वर्तमान 'ग्लोबलाईजेशन' और 'डिसेंट्रलाईजेशन' में कोई विरोध नहीं रह जाता। भारतीय वेदान्त के लिए विकेन्द्रीकरण पर आधारित वैश्विक व्यवस्था कोई नई बात नहीं। हम तो जड़-चराचर से लेकर 'वासुधैव कुटुम्बकम' तक की बात करते आए हैं, जिसके साथ 'सर्वे भवन्तु सुखिनः' की भावना अभिन्न रूप से जुड़ी है। भारतीय वैज्ञानिक जगदीश चंद्र बसु ने पेड़-पौधों में भी जीव के प्रमाण को सिद्ध कर, वेदांत-दर्शन की मान्यताओं को वैज्ञानिक प्रमाण-पत्र दिया था और पत्थर व पेड़ को भी देवता मान कर पूजने वाले भारतीय लोकमानस की आस्थाओं पर भी मानो अपनी वैज्ञानिक मोहर लगा दी थी। नई खोजों से इसमें नई बात और जोड़ लें कि आधुनिक कम्प्यूटर तर्काश्रित नहीं, प्रज्ञाश्रित प्रणाली का ही चमत्कार है। उत्पादन, व्यवसाय और सेवाओं की लघु इकाइयों के साथ काम करने वाली नवीनतम टेक्नालाजी का सामंजस्य और सेवाओं की लघु इकाइयों के साथ काम करने वाली नवीनतम टेक्नालाजी का सामंजस्य व्यावहारिक विज्ञान के साथ बिठाने की कोशिश भी भावी नए समाज के उदय की ओर संकेत करती है।

पाश्चात्य और भारतीय चिन्तन-दृष्टियों और जीवन-पद्धतियों से सामंजस्य और समन्वय की अवधारणा किस प्रकार प्रौद्योगिकी के विकास के साथ जुड़कर विश्वव्यापी रूप ले रही है, यह अपने आप में भावी विश्व-समाज के लिए एक सुखद संदेश है कि वर्तमान तनाव, असंतोष, रोष और आक्रोश का समाधान निकलेगा।

राज्य सत्ता पर ऋषि-अंकुश

यह समाधान होगा, चिंतक-विचारक श्रेष्ठ व्यक्तियों के हाथों में सत्ता सौंपना। जैसे कि भारतीय परंपरा में मनु, पृथु, जनक, राम आदि राजऋषि सत्ताधीश हुए। अथवा राज्य-सत्ता पर आसीन राजनीतिज्ञों पर सामाजिक मान्यता प्राप्त बुद्धिजीवी विद्वानों और साहित्यकारों

का अंकुश होना। उदाहरणार्थ, हमारे यहां मुनि वशिष्ठ, विश्वामित्र, द्रोण, चाणक्य आदि शास्त्र से लेकर शस्त्र तक के ज्ञाता और सर्वज्ञ किन्तु सत्ता से उदासीन ऋषि अथवा सत-सत्ताधीशों के सलाहकार रहे। निर्वाचित सत्ताधीशों को मनमानी या लोक-विरुद्ध कार्य करने पर वापस बुलाने का संवैधानिक अधिकार भी मतदान द्वारा चुनकर भेजने वाली जनता के हाथ में ही रहे, यह मांग आज कोने-कोने से उठ रही है। इसलिए भविष्य में बेहतर समाज की संभावनाएं भी इसमें निहित हैं। यदि भौतिक विज्ञान के साथ सामाजिक विज्ञान का भी विकास नहीं किया गया या आधुनिक प्रौद्योगिकी को उत्तर औद्योगिक युग की मांग के अनुरूप नहीं ढाला गया, तो भावी मानव-समाज विनाश के भंवर में पड़ सकता है। गांधी जी ने विकेन्द्रीकरण के साथ साधनों की शुद्धता पर भी जोर दिया, वह कोई दुराग्रह नहीं था। उस महामानव की दूरदृष्टि आज उत्तर आधुनिक युग की आवश्यकता बन गई है। विज्ञान की नई खोजों से अब यह संभव हो गया है कि राष्ट्र की सुरक्षा को कमजोर किए बिना हम केन्द्रीकरण से विकेन्द्रीकरण की ओर जा सकते हैं। इसी तरह विज्ञान और वेदांत, विज्ञान और आध्यात्म के समन्वय से मानवीयता पर आधारित नए समाज के निर्माण की भूमिका निर्धारित की जा सकती है— जैसे जन्म के बजाय कर्म पर आधारित समाज-व्यवस्था को संभव बनाना।

गांधी जी ने विकेन्द्रीकरण के साथ साधनों की शुद्धता पर भी जोर दिया, वह कोई दुराग्रह नहीं था। उस महामानव की दूरदृष्टि आज उत्तर आधुनिक युग की आवश्यकता बन गई है। विज्ञान की नई खोजों से अब यह संभव हो गया है कि राष्ट्र की सुरक्षा को कमजोर किए बिना हम केन्द्रीकरण से विकेन्द्रीकरण की ओर जा सकते हैं।

आज हमें ही नहीं, पूरे विश्व को उस रास्ते की तलाश है। अनियंत्रित उपभोग, हिंसा-असुरक्षा के दुष्चक्र को भेदकर वापस नियंत्रित उपभोग, अहिंसा-प्रेम और सुरक्षा की ओर आना अथवा लक्ष्य से हटकर इतनी दूर निकल आने के बाद लौटना कठिन तो हो सकता है, असंभव नहीं। यह तब तो और भी नहीं, जब पूरे विश्व से यह संकेत मिल रहे हों और विकराल स्थितियों से गुजरने के बाद उन स्थितियों का दबाव ही इस लौट के लिए बढ़ रहा हो।

लौट निश्चित है देर-सवेर, क्योंकि मनुष्य बाहरी दबाव चाहे झेल ले, अपने भीतर के दबाव को अधिक देर तक नहीं झेल सकता। इसमें संदेह नहीं कि आज हर व्यक्ति कहीं न कहीं, किसी न किसी हद तक अपने भीतर के द्वंद्व से घिरा है और उसे मुक्ति की, सुरक्षा की तलाश है। इस तलाश का मार्ग भी कहीं न कहीं, किसी न किसी हद तक गांधी-मार्ग से होकर ही निकलता है, तो क्यों न हम उसी की तलाश करें। मानवता की मुक्ति के अनेक रास्ते हो सकते हैं, पर गांधी का रास्ता शायद संतप्त मानवता के लिए सर्वाधिक उपयुक्त रास्ता है। हां, संभवतः भावी समाज का सर्वस्वीकृत रास्ता भी हो सकता है। □

लघु कथा

वापसी

विनोद कुमार लाल

बहुत दौड़-धूप के बाद जब रामनाथ बाबू अपनी बेटी का ब्याह तय कर वापस लौटे, तब घर में खुशी का माहौल छा गया। लड़का केमिकल इंजीनियर था। उसे अपनी फैक्टरी लगानी थी। फैक्टरी के लिए पूंजी के तौर पर लड़के के पिता ने आठ लाख रुपये की मांग की थी। एक ही तो लड़की थी रामनाथ बाबू की, सो उन्होंने अपनी चल और अचल सम्पत्ति समेटकर आठ लाख रुपये का जुगाड़ कर ही लिया।

विवाह सम्पन्न हो गया और उनकी बेटी रमा विदा कर दी गयी। अभी लगभग एक वर्ष का समय गुजरा होगा कि दो लाख रुपये की और मांग के साथ रमा मायके वापस भेज दी गयी। दामाद की फैक्टरी में रुपया घट गया था। घर-बार गिरवी रखकर रामनाथ बाबू ने दो लाख और जुटा ही लिये और बेटी को रुपयों के साथ विदा कर दिया।

कुछेक माह ही बीते होंगे, रमा फिर मायके भेज दी गयी। एक लाख रुपया और चाहिए था। रामनाथ बाबू को काटो तो खून नहीं। उन्हें चक्कर-सा आता देख बेटी बोल उठी, "मगर पिताजी, इस बार मैं सिर्फ रुपयों की जरूरत का संदेश लेकर नहीं आयी हूं।" "तो फिर...." बेटी की ओर देखते हुए रामनाथ बाबू ने मौन प्रश्न किया।

"मैं आज पहली बार सही अर्थों में अपने घर वापस लौटी हूं, अपने मायके नहीं।" रमा के चेहरे पर एक अद्‌भुत चमक नजर आ रही थी। दृढ़ स्वर में वह आगे बोली, "आपको अब अपनी बेटी के लिए अपने दामाद का भविष्य संवारने की जरूरत नहीं। मैं अपना भविष्य अब खुद संवार लूंगी।

रामनाथ बाबू बेटी का चेहरा देखते रह गये। □

गांधी विचार संगति : अनंत और व्यापक

डा. के. डी. गंगराडे

गांधी विचार संगति अनंत, समयहीन और व्यापक है। उनके सत्य और अहिंसा के मुख्य सिद्धान्त उतने ही आवश्यक और महत्वपूर्ण हैं जितना सूर्य हमारे जीवन के लिये। उन्होंने हमें न केवल उद्देश्यों की प्राप्ति के लिये सिद्धान्तों की पवित्रता में विश्वास करने के लिये प्रेरित किया वरन् लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये, उन पर पूरी तरह अमल करने का भी आदेश दिया। उनके अनुसार मनुष्य मानव-सेवा में ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है।

गांधी जी के अनुसार हिंसा-पथ का प्रत्येक स्थिति और हर जगह पर पूरी तरह परित्याग करना चाहिए। उन्होंने हमें सिखाया कि मतभेदों को समाप्त करने के लिये, मूल्यों के संबंध में वाद-विवाद करने, विरोधी के साधनों को हीन करके उसे परास्त अथवा समाप्त करने की भारतीय रीति नहीं है वरन् हमारा लक्ष्य विभिन्न समुदायों, जातियों, धार्मिक समूहों में मधुर संबंध स्थापित करना और द्वेष को प्रेम तथा अनुराग से जीतना होना चाहिये। सम्पूर्ण विश्व समुदाय को समकालीन हिंसायुक्त परिस्थितियों से निकलने और भविष्य में जिन मूल्यों का समावेश करना है, उन पर विचार-विमर्श के लिये बाध्य करना आवश्यक है। आज की स्पर्द्धायुक्त राजनीति में सभी राजनैतिक दल सत्ता की प्राप्ति के लिये संघर्षशील हैं। इस संघर्ष और दौड़ का वास्तविक उद्देश्य क्या है? अपने निजी या दल-हित के लिये सत्ता प्राप्त करना। आज ज्यादातर बुद्धि और शक्ति इसी कार्य में लगी है। अब पहले से भी अधिक आवश्यक प्रतीत होता है कि आपसी सहायक एवं संक्रामक संबंधों के लिए और परिश्रम किया जाए। यह केवल राजनीतिक दलों द्वारा शामिल नहीं किया जा सकता।

उन्होंने हमें सिखाया कि मतभेदों को समाप्त करने के लिए, मूल्यों के संबंध में वाद-विवाद करने, विरोधी के साधनों को हीन करके उसे परास्त अथवा समाप्त करने की भारतीय रीति नहीं है वरन् हमारा लक्ष्य विभिन्न समुदायों, जातियों, धार्मिक समूहों में मधुर संबंध स्थापित करना और द्वेष को प्रेम तथा अनुराग से जीतना होना चाहिए।

विभिन्न व्यक्तियों, राजनीतिक दलों और नेताओं ने आपसी संबंधों में सामंजस्य लाने के बजाय, द्वेष का वातावरण अधिक फैलाया है। फलस्वरूप दल बदलना, चुनावी हिंसा तथा मतदान केन्द्रों पर कब्जा आज आम बात हो गई है। सत्ता-लालसा की वजह से मनुष्य अपना मानसिक संतुलन खो बैठा है।

स्वतन्त्रता-प्राप्ति के पांच दशकों के बाद भी भारत रहने योग्य कोई उत्तम स्थान नहीं बन पाया है। इसमें कोई संदेह नहीं कि हमने विज्ञान, टेक्नोलाजी और अन्य क्षेत्रों में उल्लेखनीय प्रगति की है किन्तु हमने इस विकास के लिये जो प्रक्रिया अपनाई, उसमें मनुष्य एक-दूसरे से अधिक अलग हुआ है।

इस विकास प्रक्रिया पर पुनः विचार करने का समय आ गया है। महात्मा गांधी का डांडी मार्च का निश्चय एक ऐसा साधारण संदेश था जो प्रत्येक व्यक्ति तक आसानी से पहुंच गया। गांधी जी डांडी मार्च के द्वारा निम्नतम व्यक्ति को वह साधन प्रदान करना चाहते थे, जिससे व्यक्ति अपने परिवर्तन और समाज के विकास में अपनी भागीदारी समझ सके। साधनों की उत्तमता स्वयं अपने में उपलब्धि है। गांधी जी अपनी योजनाओं में मनुष्य को केन्द्रित रखते थे। वह अपने कार्यक्रम और योजनाओं को इस प्रकार निर्धारित करते थे, जिससे उनमें सभी लोगों की सहायता और भागीदारी सुनिश्चित हो सके और उनमें विश्व समुदाय

का एक सार्थक सदस्य बनने की क्षमता उत्पन्न हो। लोग समझते थे कि वह उनसे सीधी बात कर रहे हैं, जड़ संचार माध्यमों के जरिये नहीं। उन्होंने आत्म-अनुशासन, सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह जैसे साधनों को, नेताओं द्वारा रखे गए लक्ष्यों की प्राप्ति से अधिक महत्वपूर्ण बताया। गांधी जी ने कहा, "मैं मानव-सेवा में ईश्वर को पाने के लिये प्रयत्नशील हूं।"

वास्तव में गांधी जी का बुनियादी सिद्धान्त लोगों के साथ काम करने में, उनके हितों के विरोधाभास दूर कर उन्हें समुदाय और सामूहिक हितों के लिए अधिक सक्रिय करने के लिये प्रेरित करना है।

उनका लक्ष्य सामूहिक हितों का विकास करना था जिसमें सभी का लाभ हो। वे सर्वोदय के द्वारा सभी निजी कार्यों को प्रेरित करना चाहते थे। यह प्रक्रिया सही दिशा में सही कार्यों के लिए है जिससे विरोधी हितों की अपेक्षा आपसी सामंजस्य स्थापित हो और किसी भी मूल्य का हनन न हो। भारतीय राष्ट्र के पिता और स्वाभाविक नेता के रूप में गांधी जी लोगों को एकजुट करने और एकता स्थापित करने में सफल हुए क्योंकि वह विभिन्न हितों में समन्वय कायम कर सके और निजी व्यवहार तथा सामाजिक-आर्थिक व्यवहार में समाकलन कर एक-दूसरे के परित्याग के बिना आगे बढ़े।

गांधी जी अपनी योजनाओं में मनुष्य को केन्द्रित रखते थे। वह अपने कार्यक्रम और योजनाओं को इस प्रकार निर्धारित करते थे, जिससे उनमें सभी लोगों की सहायता और भागीदारी सुनिश्चित हो सके और उनमें विश्व समुदाय का एक सार्थक सदस्य बनने की क्षमता उत्पन्न हो। लोग समझते थे कि वह उनसे सीधी बात कर रहे हैं, जड़ संचार माध्यमों के जरिये नहीं। उन्होंने आत्म-अनुशासन, सत्य, अहिंसा और सत्याग्रह जैसे साधनों को, नेताओं द्वारा रखे गए लक्ष्यों की प्राप्ति से अधिक महत्वपूर्ण बताया।

महात्मा गांधी ने अपने सहयोगियों की वचनबद्धता हासिल की। उनमें सभी को कार्य में लगाने की अद्भुत कला थी। वह लोगों और उनकी भावनाओं को समझते थे तथा उनका विश्वास और निष्ठा प्राप्त करने का उनका अपना तरीका था। भारत जातीय मतभेद और आर्थिक पिछड़ेपन का शिकार है। भारतीय राजनीति विभिन्न समूहों की सत्ता और साधनों के विनिधान वर्गों पर आधारित है। राजनैतिक विवाद बहुत कम हो जायेंगे, यदि राजनीतिक समूहों के वर्गीकरण और साधनों के वितरण में हस्तक्षेप बंद हो जाए। गांधी जी की धारणा थी कि मनुष्य की बुनियादी आवश्यकता पशुवृत्ति से ऊपर उठकर उसे इस प्रकार परिवर्तित करने की है कि मानव सर्जनात्मक हो सके और केवल एक जीव न रह जाए। उनके अनुसार प्रेम और घृणा में विरोधाभास नहीं है वरन् ये दोनों मनुष्य का पशुवृत्ति से ऊपर उठने की आकांक्षा की आवश्यकता के पूरक हैं।

महात्मा गांधी जीवन के प्रति समग्र विचारधारा रखते थे। अतएव उनका दर्शन मनुष्य, उसके समाज, वातावरण (प्रकृति) तथा उनसे संबंधित विकास की परिधि पर निहित था। उनका विश्वास था कि मनुष्य समाज के शोषण या दोनों को मिलाकर, प्रकृति के दोहन की अपेक्षा जीवन की प्रतीकात्मक धारा है जिसमें दोनों के बीच सामंजस्य है। विकास के इस संदर्भ में मनुष्य के प्रत्येक कार्य की धुरी है। इस सबका उद्देश्य मनुष्य का नैतिक और आध्यात्मिक विकास करना है।

मनुष्य मुख्यतः अपने अन्तःकरण, स्वयंसिद्धि और अपने अंदर नैसर्गिक अच्छाई तथा बुराई को पहचानने की क्षमता से जाना जाता है। यह सब उसके ऊपर उठने के लगातार प्रयत्नों में सहायक हैं, बाधक नहीं। यह उसे न केवल उन्नमता प्रदान करते हैं कि वह लगातार ऊपर उठता रहे वरन् उसकी परम सिद्धि में भी सहायक हैं।

गांधी जी ने जो मार्ग प्रशस्त किया, उसका आधार नैतिकता, सदाचार और आध्यात्मिक अनुशासन है। उसकी नैतिकता का मुख्य आधार प्रेम है जिसका प्रत्येक भावना से गहरा संबंध है। इस प्रेम को सेवा और त्याग के रूप में प्रदर्शित करना है। भौतिक वस्तुओं और सम्पत्ति के संबंध में उनकी नैतिकता का अभिप्राय न्यासधारिता (ट्रस्टीशिप) अथवा अमानत से है। प्रत्येक व्यक्ति न्यासधारी है, न केवल मनःशक्ति और उपलब्धियों का वरन् हर वस्तु का जो उसके पास है। न्यासधारिता (अमानत) के अनुसार उसे अपनी शक्ति और वस्तुओं का सही उपयोग करना है और इसमें अपना हित त्याग करके दूसरों की भलाई को देखना है।

आज राजनीति को अपनी आय और जीविका का मुख्य स्रोत बना लिया गया है। गांधी जी के युग में राजनैतिक क्षेत्र के नेताओं ने अपने सफल तथा कामयाब व्यवसायों का परित्याग करके राजनीति को जीविका का साधन नहीं बनाया वरन् उनका उद्देश्य स्वतंत्रता आन्दोलन में सक्रिय भाग लेकर विदेशी प्रभुत्व से देश को मुक्त कराना और एक नये भारत की बुनियाद रखना था। उसके बदले में वह कुछ नहीं चाहते थे। अब उन्हीं मूल्यों की पुनरावृत्ति आवश्यक है जिससे देश का विकास हो और एकता तथा शान्ति स्थापित हो।

गांधी जी के विचारों, सिद्धांतों और मूल्यों का भारतीय परिवेश में जिक्र किया गया है किन्तु वे व्यापक और समस्त विश्व के लिये हैं और उनका भूमंडल को विनाश से बचाने के लिये प्रयोग किया जाना चाहिये। नैतिक मूल्यों के ह्रास को 1900 से 2000 तक चार अवस्थाओं में रखा जा सकता है। पहली अवस्था में नैतिक मूल्य चरम सीमा पर थे, दूसरी में कुछ घटे हैं, तीसरी में और अधिक नीचे आए तथा चौथी में पूर्णतया नष्ट हो रहे हैं। गांधी जी का मार्ग ही केवल विनाश से बचा सकता है और इस प्रक्रिया को उलटना परम आवश्यक है। □

वर्तमान युग में गांधी जी के आर्थिक विचार

डा. इन्द्रदेव सिंह*

गांधी जी का नाम भारत के राष्ट्रीय इतिहास में स्वर्ण अक्षरों में अंकित है। भारत को स्वतंत्रता दिलाने का श्रेय उन्हें ही है। देश के स्वतंत्रता आन्दोलन और भारत के सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक तथा सांस्कृतिक जीवन का जो पथ-प्रदर्शन गांधी जी ने किया, उसके कारण न केवल भारत में, वरन् विदेशों में भी उनका नाम अमर हो गया है तथा उन्हें आदर के साथ स्मरण किया जाता है। भारत की स्वतंत्रता से घनिष्ठ रूप से संबंधित होने के कारण गांधी जी को मात्र राजनीतिक विचारक तथा द्रष्टा समझना भूल होगी, क्योंकि उनके आर्थिक विचारों का महत्व भी कम नहीं है। वे अपने समय के एक महान आर्थिक चिन्तक भी थे।

गांधी जी अर्थशास्त्री नहीं थे और न ही उनके विचार अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों पर आधारित थे। वे देश में शोषण रहित आत्मनिर्भर एवं विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था का निर्माण करना चाहते थे। गांधी जी पूंजीवादी अर्थ-व्यवस्था का इसलिए विरोध करते थे कि इससे देश की राष्ट्रीय आय का थोड़े-से ही व्यक्तियों के हाथ में केन्द्रित हो जाने का भय रहता है। लाभ की प्रेरणा के कारण पूंजीवाद में हमेशा श्रमिकों का शोषण होता है। वे उत्पादन में मशीनीकरण तथा बड़े पैमाने की इकाइयों की स्थापना के भी पक्षधर नहीं थे। गांधी जी के अनुसार देश में बेरोजगारी दूर करने के लिए लघु एवं कुटीर उद्योगों का विकास होना जरूरी है। वे मशीनों के विरुद्ध नहीं थे, बल्कि उनका मानना था कि जहां बड़ी मशीनों की आवश्यकता है, वहीं उनका उपयोग किया जाना चाहिए। लेकिन जो काम हाथ से या छोटी मशीनों से हो सकते हैं, उन्हें उद्योगों द्वारा नहीं कराया जाना चाहिए। इस तरह गांधी जी ने परम्परागत अर्थशास्त्रियों की तरह अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों के प्रतिपादन में रुचि नहीं दिखाई, अपितु देश की समस्याओं के समाधान के लिए उन्होंने समय-समय पर जो विचार व्यक्त किये, लेख लिखे एवं पत्र-व्यवहार किया, उन्हीं में उनके आर्थिक विचारों को ढूंढा जा सकता है।

अर्थशास्त्र तथा नीतिशास्त्र संबंधी विचार

गांधी जी अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र में कोई भेद नहीं मानते। वे कहते हैं कि "जो अर्थशास्त्र नैतिक एवं भावात्मक मूल्यों की उपेक्षा करता है वह एक मधुमक्खी के छत्ते के समान है, जिसमें जीवन होते हुए भी सजीव जीवन का अभाव रहता है।" मार्शल, इंग्लैण्ड के ऐसे प्रथम अर्थशास्त्री थे जिन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में अर्थशास्त्र को बदनामी से बचाकर आदर का स्थान दिया। मार्शल ने धन पर बल देने के बजाय मनुष्य के आर्थिक कल्याण को अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु बताया। अर्थशास्त्र का कल्याण के साथ सम्बन्ध स्थापित करने का अर्थ यह हो गया है कि अर्थशास्त्री को कार्यों की अच्छाई तथा बुराई के सम्बन्ध में भी निर्णय देना चाहिए। मार्शल, पीगू तथा फ्रांस के प्रसिद्ध अर्थशास्त्री सिस्माण्डी की तरह गांधी जी की भी यह धारणा थी कि अर्थशास्त्र को नीतिशास्त्र से अलग नहीं किया जा सकता। उनका विचार था कि जो अर्थशास्त्र एक देश को दूसरे देश का शोषण करने की आज्ञा देता है, वह अर्थशास्त्र अनैतिक है। गांधी जी शोषित श्रम द्वारा बनी हुई वस्तुओं को खरीदना तथा उनका उपभोग करना पाप समझते थे। गांधी जी की दृष्टि में किसी भी उद्योग का मूल्यांकन उसके लाभ से नहीं आंका जाना चाहिए, बल्कि उस उद्योग के कारण लोगों के शरीर, आत्मा तथा रोजगार पर पड़ने वाले प्रभावों के आधार पर किया जाना चाहिए। गांधी जी को मांग एवं पूर्ति के नियम से घृणा थी, क्योंकि यह नियम आर्थिक लाभ के संकुचित विचार पर आधारित है। अर्थशास्त्र और नीतिशास्त्र के संबंध में गांधी जी ने लिखा है "अर्थशास्त्र जो किसी व्यक्ति अथवा राष्ट्र के नैतिक कल्याण को धक्का पहुंचाता है, अनैतिक है तथा इस कारण पापी है।" वे विदेशी कपड़ों को पहनना पाप समझते थे।

*प्रवक्ता, अर्थशास्त्र विभाग, सकलडीहा पी. जी. कालेज, सकलडीहा, चन्दौली, वाराणसी (उ. प्र.)

सादगी और सरलता

गांधी जी के विचारों में सादगी का विशेष महत्व था। गांधी जी ने माना कि भारतीय संस्कृति और सभ्यता को ध्यान में रखकर प्रत्येक व्यक्ति के जीवन का लक्ष्य 'सादा जीवन और उच्च विचार' होना चाहिए और उसे जीवन के आदर्शों एवं मूल्यों का पालन करना चाहिए। उनका कहना है कि मात्र भौतिक आवश्यकताएं ही मनुष्य का उद्देश्य नहीं होनी चाहिए। गांधी जी का यह विश्वास इस बात पर आधारित था कि असंतुष्ट आवश्यकताओं की संख्या जितनी कम होगी, हमें उतना ही कम कष्ट होगा।

गांधी जी बड़े उद्योगों के लगाने के विरुद्ध थे। उनका कहना था कि बड़े उद्योगों के लगने का परिणाम ग्रामीणों का शोषण होगा। बड़े पैमाने की औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था से उनका विरोध इसलिए था कि मिल उद्योग तथा यंत्रों के उपयोग से हिंसा का विस्तार होता है। अतः वह विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था के पक्षधर थे।

यद्यपि आवश्यकताओं के संबंध में गांधी जी का उक्त दृष्टिकोण पाश्चात्य अर्थशास्त्रियों के बिल्कुल विपरीत है, किन्तु भारतीय स्थितियों को देखते हुए वह बिल्कुल उचित है। व्यक्ति को अपने साथ-साथ समाज के कल्याण का भी ध्यान रखना चाहिए। इस प्रकार हम देखते हैं कि गांधी जी पूर्ण रूप से मानवतावादी थे और मानव मूल्यों को उन्होंने सर्वोच्च महत्व दिया।

श्रम की प्रतिष्ठा

गांधी जी ने अपने आर्थिक विचारों में श्रम को उच्च स्थान प्रदान किया है। उनके लिए श्रम की महत्ता आर्थिक व्यवस्था का मूलभूत तत्व थी। क्रोप्टकिन के समान गांधी जी ने भी यह विचार व्यक्त किया कि कार्य करना हमारी अभिरुचि का विषय है और आलस्य एक बनावटी विकास है। तत्कालीन परिस्थितियों में जिस तरह श्रम की अवहेलना की जा रही थी, उसे देखकर गांधी जी को बहुत दुख हुआ। उनका कथन था कि हम अपनी शरीर रूपी अतुल्य जीवन-मशीन को तो बर्बाद कर रहे हैं और उसके स्थान पर निर्जीव मशीनों के प्रयोग को प्राथमिकता दे रहे हैं। वे श्रम को एक प्राकृतिक नियम मानते थे और उनका विश्वास था कि जो व्यक्ति प्राकृतिक नियम का उल्लंघन करता है, वह विपत्ति को आमंत्रित करता है। गांधी जी का मानना था कि श्रम न केवल शरीर को स्वस्थ रखता है, बल्कि मस्तिष्क को भी प्रेरित करता है।

गांधी जी ने श्रम का महत्व प्रतिपादित करते हुए 'रोटी का श्रम' सिद्धान्त प्रस्तुत किया, जिसके अनुसार प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं परिश्रम करके ईमानदारी से अपनी जीविका का उपार्जन करना चाहिए। उनका विश्वास था कि इस सिद्धान्त से समानता स्थापित होगी और भुखमरी दूर होगी। इससे वर्ग-भेद समाप्त होगा तथा अमीर और गरीब के बीच संघर्ष भी समाप्त होगा।

मशीनों के बारे में विचार

गांधी जी के मशीनों संबंधी विचारों में समय और परिस्थितियों के अनुसार परिवर्तन हुए। प्रारम्भ में गांधी जी ने मशीनों के प्रयोग का तीव्र विरोध किया और चर्खे के प्रयोग पर बल दिया। वे मशीनों के प्रयोग को उस पैशाचिक सभ्यता से संबंधित करते थे जो मानव मूल्यों को भुलाकर मानव जाति को पतित कर देती है। उन्होंने हिन्द स्वराज में लिखा 'मशीनें आज की सभ्यता की प्रतीक हैं जो पाप का प्रतिनिधित्व करती है।' गांधी जी पर यह दोषारोपण किया जाता है कि उन्होंने तमाम आधुनिक मशीनों का विरोध किया, परन्तु यदि ध्यान से देखा जाए तो हम पाते हैं कि उनकी आर्थिक व्यवस्था में मशीनों का स्थान है। उन्होंने मात्र विरोध के लिए मशीनों का विरोध नहीं किया। वे कहते हैं कि उत्पादन में पुरातन विधियों का प्रयोग करने में कोई पक्षपात की बात नहीं है, क्योंकि इसके सिवाय लाखों ग्रामीणों को रोजगार देने का और कोई चारा नहीं है। उन्होंने मशीनों के बजाय मशीनों के प्रयोग की बढ़ती हुई लालसा का ज्यादा विरोध किया। वे श्रम की बचत करने वाली मशीनों का विरोध करते थे, क्योंकि मशीनों के प्रयोग से बेकार श्रमिकों की संख्या बढ़ती जा रही है जो भूखों मरने की स्थिति में पहुंच जाते हैं। वे स्वयं श्रम और समय की बचत करना चाहते थे, पर कुछ व्यक्तियों के लिए नहीं, बल्कि समस्त मानव-जाति के लिए। उनका विचार था कि मशीनों के प्रयोग से इने-गिने लोग लाखों लोगों का शोषण करते हैं, जिससे धन के केन्द्रीकरण तथा उससे सम्बन्धित बुराइयों को प्रोत्साहन मिलता है। हमारे सामने यह समस्या नहीं है कि भारत के ग्रामीणों के लिए फुरसत का समय कैसे ढूंढा जाए, बल्कि समस्या यह है कि कैसे उनके बेकार समय का सदुपयोग किया जाए।

व्यक्तिवाद

गांधी जी मानव को खंडों में विभाजित नहीं करना चाहते थे, बल्कि उनका विश्वास था कि मानव जीवन सम्पूर्ण और अविभाज्य है, अतः उसका पूर्ण रूप से विकास किया जाना चाहिए। जिस व्यवस्था में मानव के पूर्ण विकास को स्थान नहीं दिया जाता, उनका बहिष्कार किया जाना चाहिए। वे उन्हीं सुधारों को वांछनीय मानते थे जो मानव-मूल्यों को प्रतिष्ठित करते हैं। उनका विश्वास था कि लोकतंत्र मनुष्य के लिए होना चाहिए, न कि मनुष्य लोकतंत्र के लिए।

चाहते थे कि व्यक्ति को भीड़ से अलग कर उसका पोषण किया ाना चाहिए। व्यक्ति ही सामाजिक लोकतंत्र की आधारभूत इकाई । अतः व्यक्ति ही सामाजिक कीर्ति की प्रेरणा का स्रोत और आधार ोना चाहिए।

व्यक्ति और समाज के संबंधों को स्पष्ट करते हुए गांधी जी ने हा कि इन दोनों में एक-दूसरे के हित निहित होने चाहिए। व्यक्ति ो अपने साथ-साथ समाज के कल्याण का भी ध्यान रखना चाहिए।

ुद्रा सम्बन्धी विचार

गांधी जी का विचार था कि मुद्रा ने मानवीय मूल्यों को भुला दिया है तथा उत्पादक और उपभोक्ताओं के बीच की खाई को चौड़ा र दिया है। इसने बाजार को इतना विस्तृत कर दिया है कि वह मारी पहुंच से बाहर हो गया है। उनका विचार था कि मनुष्य को न के पीछे नहीं दौड़ना चाहिए। वे ऐसी आर्थिक प्रणाली की रचना रना चाहते थे जिसमें श्रम ही धन है, न कि धातु का सिक्का क्योंकि नुष्य अपने श्रम का प्रयोग अपनी इच्छानुसार कर सकता है। उनके ाब्दों में "श्रम का विनिमय, स्वतंत्र, उचित एवं समान शर्तों पर होता , अतः यह चोरी नहीं है।"

विकेन्द्रीकरण और लघु एवं कुटीर उद्योग

गांधी जी बड़े उद्योगों को लगाने के विरुद्ध थे। उनका कहना ा कि बड़े उद्योगों के लगने का परिणाम ग्रामीणों का शोषण होगा। ड़े पैमाने की औद्योगिक अर्थ-व्यवस्था से उनका विरोध इसलिए था कि मिल उद्योग तथा यंत्रों के उपयोग से हिंसा का विस्तार होता है। अतः वह विकेन्द्रित अर्थ-व्यवस्था के पक्षधर थे। उनका कहना था कि "यदि आप व्यक्तिगत उत्पादन को लाखों गुना बढ़ा दें तो क्या यह एक बड़े पैमाने पर उत्पादन नहीं कहलायेगा, किन्तु मैं समझता हूं कि आपके बड़े पैमाने का उत्पादन एक तकनीकी शब्द है, जिसका अर्थ कम-से-कम व्यक्तियों से जटिल मशीनों द्वारा अत्यधिक उत्पादन प्राप्त करना है। मैंने इसे इसलिए गलत बताया है। मशीन बहुत ही सीधी-सादी होनी चाहिए, जिसको मैं लाखों व्यक्तियों के घरों में रख सकता हूं।" इस तरह गांधी जी लघु एवं कुटीर उद्योगों के विकास के पक्ष में थे और उत्पादन का विकेन्द्रीकरण चाहते थे।

गांधी जी के आर्थिक विचार समन्वयवादी होने के कारण भारतीय परिस्थितियों के अत्यधिक सन्निकट हैं। अल्पव्ययी, श्रमसाध्य, श्रम का महत्व स्थापित करने वाले और बड़े-छोटे के भाव को दूर करने वाले हैं।

भारतीय जनसंख्या और साधनों को देखते हुए महात्मा गांधी ने विशाल उद्योगों की तरफ ध्यान नहीं दिया, अपितु कृषि प्रधान और भारत को गांवों वाला देश जानकर लघु उद्योगों को विकसित करने पर अधिक ध्यान दिया, क्योंकि ऐसा न करने से नगरों का विकास होगा। अन्न उत्पादन के क्षेत्र में स्थिति भयावह हो जायेगी और देश का सबसे अधिक धन खाद्य सामग्री के एकत्रीकरण में ही व्यय हो जायेगा। राष्ट्र की अधिकतर जनता आजीविका रहित, अकर्मण्य हो जाएगी और अपने परम्परागत व्यवसाय की कुशलता को छोड़ देगी एवं शहरों की ओर झुकेगी। कृषि की स्थिति चिन्तनीय हो जायेगी। इससे दूसरे राष्ट्र हमारी दुर्बलता और अपूर्णता का लाभ भी उठायेंगे, पुनः खाद्य सामग्री कहां से आयेगी? ऐसी स्थिति में हम दूसरे राष्ट्र के आश्रित हो जायेंगे, वे लोग अधिक धन लेकर अथवा भूखा मारकर ही हमारी शक्ति को क्षीण कर सकते हैं। गांधी जी के आर्थिक विचारों के कारण ही हमारा ध्यान ग्रामीण विकास, कृषि की समुन्नति और लघु उद्योगों की उन्नति की ओर गया। महात्मा गांधी कृत्रिमता की अपेक्षा प्राकृतिक साधनों और आत्म-संयम पर अधिक बल देते थे। जनसंख्या के नियंत्रण के लिए नैतिक नियमों का परिपालन गांधी जी ने आवश्यक माना था, क्योंकि कृत्रिम साधनों से शारीरिक स्फूर्ति, मानसिक वृत्ति और नैतिक बल का ह्रास हो सकता है।

आज भारतीय दृष्टिकोण से यह अनुभव किया जाने लगा है कि कृषि के विकास, ग्रामों की उन्नति, लघु उद्योगों को प्रोत्साहन दिये बिना और आजीविकापरक शिक्षा पद्धति को विकसित किये बिना देश का कल्याण नहीं हो सकता। हमें अपने राष्ट्र के साधनों के अनुरूप ही शिक्षा पद्धति को ढालना होगा। पर्यावरण, परिस्थिति, भौगोलिक स्थिति तथा अपने उपलब्ध साधनों के आधार पर ही स्वावलम्बी बनाने वाली शिक्षा पद्धति से कुशल, विनम्र, उत्साही, त्यागी एवं राष्ट्र निर्माताओं के द्वारा इसको प्रारंभ करने पर महात्मा गांधी जी ने बल दिया है।

गांधी जी के आर्थिक विचार समन्वयवादी होने के कारण भारतीय परिस्थितियों के अत्यधिक सन्निकट हैं। अल्पव्ययी, श्रमसाध्य, श्रम का महत्व स्थापित करने वाले और बड़े-छोटे के भाव को दूर करने वाले हैं। इसके साथ ही साथ जीवन को सादा और विचारों को महान बनाने वाले हैं। वे देश के आर्थिक विकास, समस्त आधुनिक समस्याओं के समाधान और सुख-प्राप्ति के लिये परमोपयोगी हैं। महात्मा गांधी के इन आर्थिक विचारों को संसार के युद्धों से संत्रस्त और शान्ति चाहने वाला प्रत्येक राष्ट्र, मान्यता दे रहा है। भारत के संविधान में भी गांधी जी के विचारों को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। गांधी जी के विचार आज भी उतने ही प्रासंगिक हैं, जितने पहले थे। उनमें समयानुसार संशोधन करके उनसे गरीब और विकासशील राष्ट्र लाभ प्राप्त कर सकते हैं। □

Collector's item

The Publications Division

celebrates the

50 Years of India's Independence

with the release of a unique

Pictorial Diary for 1998

- The Diary records the highlights of nation's struggle for Swaraj, from the first war of Independence to the dawn of Freedom.
- Interspersed in it are 36 rare photographs, making it a collector's item.
- Hardbound with silk cover, the 108-page diary is designed to complement your skills at day management.

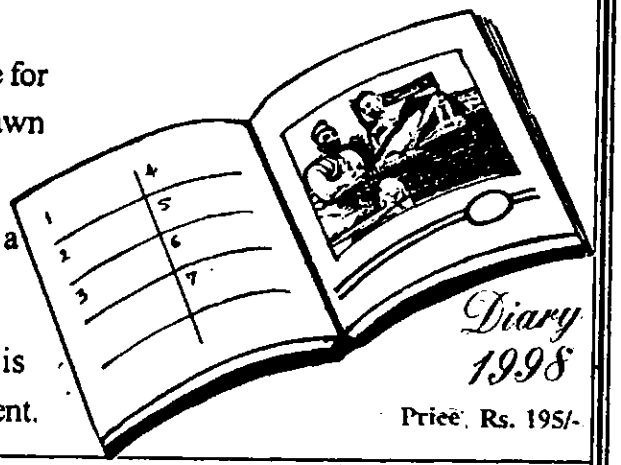

Price: Rs. 195/-

Available at :

Sales Emporia of Publications Division :

Patiala House, Tilak Marg, New Delhi; Super Bazar, Connaught Circus, New Delhi; Rajaji Bhavan, Besant Nagar, Chennai; 8, Esplanade East, Calcutta; Bihar State Cooperative Bank Building, Ashoka Rajpath, Patna; Press Road, Thiruvananthapuram; 27/6, Ram Mohan Rai Marg, Lucknow; Commerce House, Currimbhoy Road, Ballard Pier, Mumbai; State Archaeological Museum Building, Public Gardens, Hyderabad; Ist Floor, 'F' Wing, Kendriya Sadan, Koramangala, Bangalore.

PIB Sales Counters :

C.G.O. Complex 'A' Wing, A.B. Road, Indore; 80, Malviya Nagar, Bhopal; K-21 Nand Niketan, Malviya Nagar, 'C' Scheme, Jaipur.

गांधी जी और ग्रामीण विकास

करुणेश प्रताप मिश्र*

स्वतंत्रता-प्राप्ति के बाद 1950-60 के दशक में ग्रामीण विकास के प्रति यह दृष्टिकोण अपनाया गया कि कृषि विकास और सामुदायिक विकास द्वारा ग्रामीण जनता के जीवन को बेहतर बनाया जाए। 1960 के बाद संकुचित अर्थ लेते हुए विशिष्ट लक्ष्य समूह यानी ग्रामीण निर्धनों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में सुधार को ग्रामीण विकास का एकमात्र लक्ष्य माना जाने लगा।[1] कुल मिलाकर ग्रामीण विकास की रणनीति में "कृषि विकास और निर्धनों को उत्पादिक परिसंपत्ति प्रदान करने (समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम) तथा मजदूरी, रोजगार (जवाहर रोजगार योजना) प्रदान करके उन्हें गरीबी रेखा से ऊपर उठाने के प्रयास किये गये। इन सभी ग्रामीण विकास कार्यक्रमों को अपेक्षित सफलता न मिलने के लिए अत्यधिक केन्द्रीकृत कार्यान्वयन और जन-जागरूकता तथा जन-सहभागिता का अभाव उत्तरदायी हैं। ग्रामीण विकास के गांधीवादी दृष्टिकोण को पूर्ण रूप से नहीं अपनाया गया और केवल आर्थिक जीवन को बेहतर बनाने के एकतरफा और आधे-अधूरे प्रयास किये गये। इधर के वर्षों में विकास की नयी रणनीति के अन्तर्गत 'जन-सहभागिता के साथ सरकारी कार्यक्रम' के स्थान पर 'सरकारी भागीदारी के साथ जनता के कार्यक्रम' को प्राथमिकता दी जा रही है।[2]

पांच दशकों के ग्रामीण विकास के फलस्वरूप आज भी ग्रामीण समाज घोर नागरिक असुविधाओं के बीच जी रहा है। देश की कुल आबादी का 74.3 प्रतिशत (1991 की जनगणना) ग्रामीण आबादी है जिसमें लगभग 40 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा से नीचे हैं, आधी से अधिक आबादी निरक्षर है, 30,000 की जनसंख्या पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (वार्षिक संदर्भ ग्रंथ भारत—1994, पृ. 198—199) की व्यवस्था और मात्र 12.4 प्रतिशत ग्रामीण आबादी के लिए सफाई (राष्ट्रीय नमूना सर्वेक्षण आंकड़े) का प्रबंध हो सका है। ग्रामीण प्रशासन को चलाने के लिए स्थापित पंचायती राज संस्थाओं के कार्यान्वयन तथा निष्पादन से यह जाहिर है कि ग्रामीण जनता इन संस्थाओं के प्रति उदासीन है और ग्रामीणों में इन स्वशासी संस्थाओं के अधिकारों के संबंध में जागरूकता नहीं आई है। इस प्रकार ग्रामीण विकास और गांवों के प्रशासन के लिए स्थापित पंचायती राज संस्थाएं अपने लक्ष्यों को प्राप्त नहीं कर सकी हैं। इसलिए विशिष्ट क्षेत्र या लक्ष्य समूह के विकास तथा आर्थिक वृद्धि के स्थान पर ग्रामीण विकास के सर्वतोमुखी दृष्टिकोण को अपनाना और तदनुरूप नयी रणनीति बनाना आवश्यक है। इस संदर्भ में ग्रामीण विकास का गांधीवादी ढांचा एक कारगर विकल्प हो सकता है।

ग्रामीण विकास के प्रति गांधी जी समग्र दृष्टिकोण के हिमायती थे। इस दृष्टिकोण के अंतर्गत गांवों का आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक एवं सांस्कृतिक विकास परस्पर संबंधित है और विकास की प्रक्रिया में ग्रामीणों के सम्पूर्ण जीवन को अनुप्राणित होना आवश्यक है। आर्थिक रूप से आत्म निर्भर, राजनीतिक रूप से स्वशासित, सामाजिक रूप से समानता-मूलक और शारीरिक श्रम को गरिमा प्रदान करने तथा ग्रामीण संस्कृति का संरक्षण करने वाले गांवों का निर्माण गांधी जी का लक्ष्य था। गांधी जी के अनुसार, गांवों की पुनर्रचना में "उद्योग, हुनर, तन्दुरुस्ती और शिक्षा—इन चारों का सुंदर समन्वय होना चाहिए।"[3] उनके सपने के 'गांव में कवि होंगे, चित्रकार होंगे, शिल्पी होंगे, भाषा के पण्डित और खोज करने वाले लोग भी होंगे। थोड़े में जिन्दगी की ऐसी कोई चीज न होगी, जो गांव में न मिले।'[4] गांधीवादी अर्थशास्त्र में स्वास्थ्य, शिक्षा, कृषि, बेरोजगारी आदि समस्याओं के व्यावहारिक समाधान खोजे गये हैं।

कृषि उपज में वृद्धि का कारगर उपाय गांधी जी का आर्गेनिक फार्मिंग ही है जो स्थानीय संसाधनों के उपयोग पर आधारित है और जिससे पर्यावरण प्रदूषण का खतरा भी नहीं रहता। ग्रामीण क्षेत्र में बेकार की चीजों से उर्वरक एवं कम्पोस्ट बनाए जा सकते हैं। इधर के वर्षों में विश्व के कई देशों में 'आर्गेनिक फार्म' की संख्या में वृद्धि हुई है।

*सहायक प्राध्यापक, राजनीति विज्ञान शासकीय महाविद्यालय, वैढ़न, म. प्र.

सबके लिए स्वास्थ्य

ग्रामीण क्षेत्र में 'सबके लिए स्वास्थ्य' का लक्ष्य तब तक पूरा नहीं हो सकता, जब तक ग्रामीणों को गांव की सफाई के महत्व की जानकारी न दी जाए और उन्हें उसके लिए प्रेरित न किया जाए। सफाई के प्रति लापरवाही और कुपोषण से अधिकांश बीमारियां पनपती हैं।

"गांवों में करने के कार्य ये हैं कि जहां-जहां कूड़े-करकट तथा गोबर के ढेर हों, वहां से उन्हें हटाया जाए और कुंओं तथा तालाबों की सफाई की जाए।"[5] सफाई के काम को बड़ी आसानी से ग्रामीण नवयुवक या कार्यकर्त्ता सम्पन्न कर सकते हैं। कूड़े-करकट और मल-मूत्र को खाद के रूप में परिणत करके कृषि में पुनः उपयोग किया जा सकता है। ग्रामीणों के भोजन में हरी पत्तियों के व्यापक प्रयोग और पशुधन से प्राप्त दूध के सेवन से कुपोषण की समस्या का अन्त हो जाएगा। गांधी जी के अनुसार "मेरी राय में जिस जगह शरीर सफाई, घर सफाई और ग्राम सफाई हो तथा युक्ताहार और योग्य व्यायाम हो, वहां कम-से-कम बीमारी होती है।"[6] रोगों का कुदरती इलाज ग्रामीण इलाके में एक-मात्र विकल्प है। स्वदेशी जड़ी-बूटियां सस्ती और सुलभ हैं और उनके प्रयोग के लिए विशिष्ट ज्ञान की भी आवश्यकता नहीं पड़ती। इन जड़ी-बूटियों के प्रयोग से अधिकांश रोगों से मुक्ति पाई जा सकती है और एलोपैथिक दवाओं के विपरीत इनके प्रयोग से कुप्रभाव भी नहीं होते।

कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों से ग्रामीण बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है और ग्रामीणों का नगर की ओर पलायन, पर्यावरण प्रदूषण तथा औद्योगिक कचरों की समस्या से मुक्ति पाई जा सकती है। स्थानीय तौर पर कच्चे माल के रूप में सुलभ कृषि उत्पादों पर आधारित उद्योगों से बेरोजगारी की समस्या का समाधान सम्भव है। आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामोद्योगों की रक्षा बड़े उद्योगों से होने वाली प्रतियोगिता से की जाए। बड़े उद्योगों की स्थापना उन उत्पादों के लिए ही की जाए जिनका निर्माण ग्रामोद्योगों के द्वारा संभव नहीं है।

ग्राम शिक्षा

ग्रामीण विकास की गांधी जी की योजना में शिक्षा का स्थान महत्वपूर्ण है। इस शिक्षा योजना के अन्तर्गत स्वावलंबी विद्यालय, व्यावसायिक शिक्षा और शारीरिक श्रम के प्रति गरिमामय दृष्टिकोण के विकास को विशेष महत्व प्राप्त है। गांधी जी की कल्पना एक ऐसे स्वावलम्बी विद्यालय के निर्माण की थी, जहां कताई-बुनाई सिखाई जाती हो और जिसके पास कपास के खेत भी हों। यदि बच्चों को आस-पास के वातावरण के अनुकूल किसी धंधे की शिक्षा दी जाएगी तो वह शिक्षा प्राप्त करके स्वावलम्बी बन सकते हैं। इन बच्चों को व्यावसायिक शिक्षा के अलावा अन्य विषयों का भी ज्ञान कराया जाएगा। "इस तरह औद्योगिक शिक्षा, जिसमें उनकी पाठशाला का अधिकतर समय व्यतीत होगा, के साथ-साथ वे प्राथमिक इतिहास, भूगोल और गणित की जबानी तालीम भी पाते जाएंगे। वे सदाचार सीखेंगे, रात-दिन की व्यावहारिक सफाई-स्वच्छता और आरोग्य का पदार्थ-पाठ पढ़ेंगे, जो कुछ सीखें उसे अपने साथ अपने-अपने घरों में ले जाएंगे और चुपचाप ए क्रांतिकारी का काम करने लगेंगे।"[7] इस प्रकार शिक्षा द्वारा शारीरि और मानसिक विकास के साथ-साथ छात्रों में राजनीतिक चेतना प्रसार तथा उनके सामाजिक दायित्वों का ज्ञान आवश्यक रूप कराया जाएगा।

कृषि

गांधी जी का अर्थशास्त्र ग्रामीण अर्थशास्त्र है और ग्रामी अर्थ-व्यवस्था मूलतः कृषि पर आधारित है। 1949-50 1994-95 के बीच कृषि उत्पादन की वृद्धि दर 2.65 प्रतिशत (संद ग्रंथ भारत 1996, पृ. 348) रही है। हरित क्रांति के फलस्व विविधतापूर्ण खेती के स्थान पर खेती के तरीकों में एकरूपता जोर दिया गया। महंगे निवेश, जैव-विविधता का नाश तथा मि की उपज क्षमता में कमी हरित क्रांति के दुष्परिणाम सिद्ध हुए। उर्वर के अंधाधुंध प्रयोग के कारण मिट्टी की क्षारीयता बढ़ी। परिणाम उर्वरकों के अधिक प्रयोग के बावजूद उपज में वृद्धि नहीं हो रही दूसरी ओर, उर्वरकों के आयात 1993-94 में 2607.1 करोड़ रु (संदर्भ ग्रंथ भारत -1994, पृ. 55 खर्च हुए और अब यह आवश्यक गया है कि उर्वरकों की आपूर्ति घ उत्पादन से की जाए। कुल मिला कृषि उपज में वृद्धि का कारगर उप गांधी जी का आर्गेनिक फार्मिंग ही जो स्थानीय संसाधनों के उपयोग आधारित है और जिससे पर्याव प्रदूषण का खतरा भी नहीं रह ग्रामीण क्षेत्र में बेकार की चीजों उर्वरक एवं कम्पोस्ट बनाए जा सकते हैं। इधर के वर्षों में विश्व कई देशों में 'आर्गेनिक फार्मों' की संख्या में वृद्धि हुई 1990 में फ्रांस में 4,000, जर्मनी में 2,690, स्वीडन 1,900, आस्ट्रिया में 1,250 तथा स्पेन में 1,000 ऐसे फार्म चल जा रहे हैं।[8]

ग्रामीण बेरोजगारी

गांधी जी के अनुसार ग्राम स्वराज्य का एक पहलू आर्थि आत्म-निर्भरता है। इसके लिए शहरों द्वारा गांवों का तथा मशी द्वारा दस्तकारों के शोषण को रोकना आवश्यक है। ग्रामीण क्षेत्र लगभग 40 प्रतिशत लोग गरीबी की रेखा के नीचे रह रहे हैं, वहीं बेरोजगारों की संख्या 2 करोड़ तीस लाख है, जबकि वास्तवि

संख्या 3 करोड़ 69 लाख है।[9] रोजगार की वृद्धि दर इधर के वर्षों में मात्र 0.95 प्रतिशत रही है।[10] कृषि क्षेत्र में सभी बेरोजगारों को रोजगार उपलब्ध नहीं हो सकता। इसलिए उद्योग ही एकमात्र विकल्प बचता है। बड़े उद्योगों की स्थापना और मशीनीकरण बड़े पैमाने पर बेरोजगारी उत्पन्न करेंगे, क्योंकि बड़े उद्योग पूंजीपरक होते हैं। बेरोजगारी को इस उपाय से समाप्त नहीं किया जा सकता। "यन्त्रों से काम लेना तभी अच्छा होता है जबकि किसी निर्धारित काम को पूरा करने के लिए आदमी बहुत कम हों या नपे-तुले हों। पर यह बात हिन्दुस्तान में तो है ही नहीं। यहां काम के लिए जितने आदमी चाहिए, उससे कहीं अधिक बेकार पड़े हुए हैं।" [11] इस सम्बन्ध में आम सहमति है कि कृषि उत्पाद पर आधारित उद्योगों से ग्रामीण बेरोजगारी को दूर किया जा सकता है और ग्रामीणों का नगर की ओर पलायन, पर्यावरण प्रदूषण और औद्योगिक कचरों की समस्या से मुक्ति पाई जा सकती है। स्थानीय तौर पर कच्चे माल के रूप में सुलभ कृषि उत्पादों पर आधारित उद्योगों से बेरोजगारी की समस्या का समाधान सम्भव है। आवश्यकता इस बात की है कि ग्रामोद्योगों की रक्षा बड़े उद्योगों से होने वाली प्रतियोगिता से की जाए। बड़े उद्योगों की स्थापना उन उत्पादों के लिए ही की जाए जिनका निर्माण ग्रामोद्योगों के द्वारा संभव नहीं है। गांवों में आटा पीसने वाली चक्की, तेल निकालने वाले कोल्हू, गुड़ निर्माण, मधुमक्खी पालन, सूत कताई, कपड़ा बुनाई, चमड़ा निकालने, साबुन बनाने, बर्तन निर्माण और कागज बनाने के उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं। इसके फलस्वरूप उद्योग और खेती के बीच समन्वय संभव है।[12] सहकारी समितियां ग्रामोद्योगों के विकास में सामूहिक प्रयत्न को प्रेरणा प्रदान करने में उल्लेखनीय भूमिका अदा करेंगी। ये सहकारी समितियां उद्योगों के लिए कच्चे माल और ग्रामीणों के लिए आवश्यक अनाजों का संग्रह, निर्मित उत्पादों की बिक्री, बोने के लिए बीज, खेती के औजार तथा कम्पोस्ट के वितरण तथा कर वसूली में सरकार और ग्रामीणों के बीच मध्यस्थता का कार्य करेंगी।[13] सरकार अद्यः संरचना का विकास कर, लागत दाम पर कच्चे माल की आपूर्ति तथा आसान किस्तों पर उत्पादन के औजार उपलब्ध कराकर और गांव की जरूरत से अधिक उत्पादों को स्वयं खरीदकर गांवों के विकास में सहायता करेगी।

पंचायतों द्वारा प्रशासन

आर्थिक रूप से स्वावलम्बी गांवों के प्रशासन को सुचारू रूप से चलाने के लिए गांधी जी ने पंचायती राज की कल्पना की। जन-चेतना को व्यापक रूप से जाग्रत करने के पश्चात आर्थिक रूप से विकेन्द्रित ग्रामीण समाज में ही राजनीतिक विकेन्द्रीकरण प्रभावी हो सकेगा। शिक्षा, सफाई, दवा-दारू और पेयजल की व्यवस्था जैसे कार्यों का संपादन पंचायतें करेंगी। ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में वांछित परिवर्तन और पंचायतों की सफलता के मार्ग में आने वाली बाधाओं को अहिंसक माध्यमों से दूर किया जा सकता है। निर्धनों के बीच चेतना के प्रसार, सत्याग्रह द्वारा जनशक्ति के अभ्युदय तथा निर्धनों के संगठित असहयोग से शोषणमुक्त ग्रामीण समाज की स्थापना हो सकती है।

विद्यार्थियों तथा शोधकर्ताओं की भूमिका

ग्रामीणों में जागरूकता लाने में जहां ग्रामसेवकों की महत्वपूर्ण भूमिका होगी, वहीं ग्रीष्मावकाश में विद्यार्थी गांवों में जाकर प्रौढ़ साक्षरता, सफाई के नियमों की जानकारी, मामूली बीमारियों का इलाज तथा सामाजिक कुरीतियों जैसे—छुआछूत, बाल-विवाह, नशाखोरी आदि को दूर करने तथा राजनीतिक शिकायतों के अध्ययन जैसे कार्यों को पूरा करेंगे।[14] गांधीवादी अर्थशास्त्र में कुटीर उद्योगों में उत्पादन के औजारों तथा पद्धतियों में गुणात्मक सुधार, सावयवी खाद के उत्पादन, कूड़ा-करकट आदि को कम्पोस्ट में परिवर्तित करने के तरीके शोध के प्रमुख विषय हैं। इस प्रकार शोधार्थी भी अपने ज्ञान से ग्रामीण विकास में योगदान कर सकते हैं।

उपर्युक्त विवेचन से यह स्पष्ट है कि उत्पादन के श्रमपरक साधनों के प्रयोग द्वारा बेरोजगारी तथा निर्धनता की समाप्ति, सावयवी खेती द्वारा पर्याप्त खाद्यान्न की व्यवस्था, स्वदेशी जड़ी-बूटियों के उपयोग से सभी के लिये स्वास्थ्य के अवसर, स्वावलम्बी विद्यालयों द्वारा सबको शिक्षा और सहभागिता तथा उत्तरदायी नागरिकों द्वारा संचालित पंचायतों के प्रशासन से गांवों का सर्वतोमुखी विकास संभव है।

संदर्भ-सूची

(1) देसाई, ए.आर. रूरल डेवलपमेन्ट एण्ड ह्यूमन राइट्स : इकानामिक एण्ड पोलिटिकल वीकली, एक अगस्त 1987.

(2) मिश्रा, एस.एन. हारिजिन्स आफ रूरल डेवलपमेन्ट एडमिनिस्ट्रेशन 1989 संस्करण, मित्तल पब्लिकेशन्स दिल्ली, पृ. 26.

(3) गांवों का पुनर्निर्माण, नवजीवन प्रकाश मंदिर, पृ. 7 पर उद्धृत, हरिजन सेवक 10-11-46.

(4) वही, पृ. 7 हरिजन सेवक 10-11-46.

(5) वही, पृ. 9 हरिजन सेवक 15-02-35.

(6) हरिजन सेवक, 26-05-46.

(7) हिन्दी नवजीवन, 11-07-29.

(8) द यूरोपियन, 28-30 दिसम्बर 1990 पृ. 13.

(9) अशरफ अली, गांधियन वियु आफ सस्टेनेबल डेवलपमेंट, इंडियन जर्नल आफ पब्लिक एडमिनिस्ट्रेशन, जुलाई-सितम्बर 1993, पृ. 276.

(10) आदिशेषिया, माल्कम गांधी एण्ड इंडियन इकानामी टुडे, गांधी मार्ग जनवरी-मार्च 1992, पृ. 396.

(11) हरिजन सेवक 23-11-34.

(12) कुमारप्पा इकानामी आफ परमानेन्स, सर्वसेवा संघ प्रकाशन, वाराणसी पृ. 149-157.

(13) वही, पृ. 139-40.

(14) यंग इंडिया, 26-12-29. □

साथ तो इन्हीं का दूंगी

कुलवन्त राजपूत

सुशीला के पिता सरनाम सिंह पण्डित के यहां से लौटे तो बहुत प्रसन्न थे। गौने का लग्न अगले माह पंचमी का निकला था। सुशीला की मां दमयन्ती को पास बुलाकर बतियाने लगे—"कितने लोगों को बुलाना है, क्या-क्या देना है, हलवाई कौन-सा ठीक रहेगा, मिठाइयां कौन-कौन सी दावत के लिए ठीक रहेंगी और कौन-कौन सी डलिया के लिए।" लगता था कि सरनाम सिंह को आज ही सुशीला को विदा करना है क्योंकि इतना उत्साह या तो उनमें सुशीला के विवाह के समय था या आज जब पण्डित जी ने सुशीला के गौने का मुहूर्त बता दिया था। भला उत्साह क्यों न होता, सुशीला उनकी एकमात्र पुत्री जो थी। सरनाम सिंह ने उसका विवाह भी बड़े चाव से किया था। सुन्दर-सुयोग्य वर और सभ्य-सुसंस्कारी ससुराली मिलना तो वे अपनी पुत्री सुशीला का भाग्य ही मानते थे।

दमयन्ती को चुहल सूझी—"क्या आप जल्दी से बेटी को आंखों से दूर कर देना चाहते हैं? कितने अधीर हो रहे हैं आप, बेटी को घर से निकालने के लिए।"

"यह तुमने क्या कह दिया सुशीला की मां? मैं तो सुशीला बेटी को इतना प्यार करता हूं कि कोई अपने बेटे को भी नहीं करता होगा। और फिर तुम तो अच्छी तरह जानती हो यह बात। कौन पिता अपनी पुत्री को अपने से दूर करना चाहता है? पर कलेजे पर पत्थर रखकर उसे खुशी-खुशी ससुराल तो सभी भेजते हैं। जब तक पुत्री अपने ससुराल में अपने पति और सास-ससुर को अपने अच्छे व्यवहार से अनुकूल नहीं कर लेती, तब तक क्या मां-बाप को चैन आता है? सच कहो सुशीला की मां, क्या तुम सुशीला को लेकर पूरी तरह आश्वस्त हो? सुबोध और उसके माता-पिता लगते तो सज्जन हैं। किन्तु सच कहूं सुशीला की मां, जब तक सुशीला का गौना नहीं हो जाता और वह कुछ दिन ससुराल में रहकर खुश-खुश नहीं लौटती तब तक मुझे तो चैन नहीं आयेगा।"

"हमारी बेटी तो इतनी सुन्दर, सुशील, सहनशील और सलीके वाली है कि वह हरेक का दिल जीत लेती है। देख लेना, वह अपनी ससुराल में पुजेगी। इसलिए मुझे तो उसकी तनिक भी चिन्ता नहीं।"

"वह तो ठीक है सुशीला की मां, पर पिता का दिल बेटी के लिए सदैव शंका से घिरा रहता है। इसीलिए हर पिता पुत्री की ओर से निश्चिन्त होने के बाद गंगा नहाने जाता है या न भी जाये तो भी कहता यही है कि गंगा नहा लिए। खैर, तुम सुशीला को लेकर दो-एक दिन में बाज़ार हो आओ, सुशीला की पसन्द से सुशीला तथा कुंवर साहब के लिए कपड़े खरीद लाओ, सास-ससुर तथा अन्य लोगों के लिए किसी दिन हम दोनों चले-चलेंगे और खरीद लायेंगे।"

दोनों की बातें कब समाप्त होतीं कोई पता नहीं, वो तो सुशीला अपनी एक सहेली के यहां से जब लौटी तो उसे देखकर दोनों चुप हो गये। सरनाम सिंह बाहर चले गये और दमयन्ती उठकर रसोईघर में चली गयी।

रात को दमयन्ती ने पुत्री के सामने बाज़ार चलने की बात रखी — "बेटी, तू अपनी सहेली उमा तथा उसकी मां से सुबह कह आना कि वह दोपहर को हमारे साथ बाज़ार चली चलें। तुम दोनों होंगी, तो अपनी पसन्द से नए फैशन के कपड़े वगैरह ले लोगी, हमें तो यह सब आता नहीं। तेरे पिताजी तो मेरे ऊपर डालकर अलग हुए। अब खराब निकल आएं तो मुश्किल, और महंगे ले आओ तो मुश्किल। याद से सुबह कह आना बेटी। मैं तो भूल जाती हूं।"

"पर बात क्या है मां, मेरे पास तो बहुत कपड़े हैं, मुझे तो कपड़ों की कोई ज़रूरत है ही नहीं।"

दमयन्ती मुस्कुरा पड़ी— "क्या अब हमारे ही घर बैठी रहेगी, अपने घर नहीं जायेगी क्या? अरे बेटी, मां-बाप के सर से बेटी का बोझ तो उसका गौना करके ही उतरता है। तेरे पिताजी पण्डित के पास गये थे आज। अगले महीने की पंचमी का ही तो मुहूर्त निकला है। सुबोध के पिताजी की चिट्ठी आयी थी कि कोई शुभ मुहूर्त निकलवा कर सूचित करें ताकि वे गौना करा ले जायें। अब तेरे और सुबोध के लिए तो तेरी पसन्द से ही कपड़े वगैरह लेने होंगे। तभी तो कह रही थी कि उमा भी तेरे साथ होगी तो तुझे भी सहूलियत होगी।"

सुशीला का चेहरा उतर गया। कुछ देर तक वह चुप रही। पता नहीं क्या सोच रही थी वह। मां की अपेक्षाओं पर पानी फिर गया। दमयन्ती ने तो सोचा था कि उसकी बेटी गौने की बात सुनते ही खिल जायेगी। नारी होने के नाते वह जानती है कि हर लड़की अपने विवाह-गौने की बात सुनकर कितना ही मना करे, कितना ही रोये पर मन में तो अज्ञात खुशी, अनजानी सिहरन और कुछ अद्भुत पाने की उत्कण्ठा होती ही है। पर यह क्या? न तो सुशीला शर्मायी, न लजायी, न मुंह पल्लू

से ढांपकर मुस्कुरायी और न उठकर वहां से भागी। दमयन्ती किसी अनजानी आशंका से सिहर गयी। बड़ी आत्मीयता से बोली– "क्या बात है बेटी? तू कोई जवाब क्यों नहीं देती?"

सुशीला मौन बैठी रही। उसके मन में चल रहे द्वन्द्व को कोई नहीं जानता था, केवल दमयन्ती उसकी टोह लेने का प्रयास कर रही थी। दमयन्ती के मातृत्व ने एक बार फिर पुत्री के दंश की टोह लेने का प्रयास किया– "बेटी, तूने तो कभी बताया ही नहीं, क्या शादी पर किसी ने लेने-देने के बारे में कोई उलाहना दिया था या सुबोध तुझे...."

सुशीला का मौन टूटा – "मां, मैं किसी के बारे में आपसे या किसी और से कुछ कहती तो तब, जब कोई मुझसे कुछ कहता। मां बहुत भले लोग हैं वे। किसी ने कुछ नहीं कहा मां।"

"फिर क्या बात है बेटी? जब तेरे ग़ौने की बात होती है, तब तू इसी तरह उदास हो जाती है। मुझे बता, क्या परेशानी है तुझे? क्या सुबोध तुझे प्यार नहीं करता? मुझे बता, मेरी बेटी।"–पूछते हुए दमयन्ती का गला भर आया। शादी के बाद ससुराल से लौटे सुशीला को अब तकरीबन पांच महीने बीत चुके थे। इस बीच तो कभी सुशीला ने एक बार भी ससुराल की कोई शिकायत नहीं की। दमयन्ती ने सुशीला में केवल एक ही अन्तर पाया है कि जब से वह ससुराल से लौटी है, अधिकांश समय अपने कमरे में ही बिताती है और कुछ-न-कुछ पढ़ती रहती है। दमयन्ती को इसमें कुछ भी असामान्य नहीं महसूस हुआ। वह जानती है कि जिन मध्यम परिवारों में जवान लड़कियों पर मां-बाप का कड़ा अंकुश होता है, वे विवाह के बाद कुछ दिनों तक एक स्वतन्त्रता का अनुभव करती हैं और सारे प्रतिबन्धित कार्य इस बीच करती हैं। नवविवाहित युवतियां और कुछ नहीं, तो कम-से-कम प्रेम-कहानियां और सेक्स-साहित्य (यदि उपलब्ध हो सके तो) अवश्य पढ़ती हैं और प्रेम-पत्र लिखने का अपना अरमान पति को अत्यन्त बनावटी किन्तु भावुक पत्र लिखकर पूरा करती हैं। यह भी दमयन्ती जानती है कि नवविवाहित युवती को फिर पीहर में रहना अच्छा नहीं लगता और वे अपने गौने की उत्सुकता से प्रतीक्षा करती है। दमयन्ती ने कभी यह जानने का प्रयास ही नहीं किया कि वह अपने कमरे में अकेले बैठकर क्या पढ़ती है। पर इस समय उन्हें दाल में कुछ काला अवश्य लगा।

सुशीला न लजायी, न सकुचायी। वह बोली–"यदि अपने घर से निकालने की जल्दी न हो, तो मेरा गौना अभी मत करो मां! जब गौने का सही समय आएगा तो मैं खुद ही कह दूंगी। इतनी जल्दी मत करो मां! और बाबूजी को भी समझा देना कि मेरी ससुराल चिट्ठी डालने की जल्दी न करें। अगर उधर से कोई चिट्ठी आए तो कोई बहाना करके टाल दें।"

"पर बेटी बात क्या है? कुछ तो बता! तेरी उम्र की लड़कियां तो सुसराल जाने की कैसी जल्दी मचाती हैं, तुझें तो पता है। श्यामलाल की बेटी पुष्पा ने तो विवाह के एक महीने बाद ही अपने पति को चिट्ठी लिख दी थी कि आकर ले जाओ। हमारा ज़माना तो कुछ और था, पर सच कहती हूं चिट्ठी तो मैंने अपने पीहर से तेरे बाबूजी को कभी नहीं लिखी, पर इन्तज़ार ज़रूर किया करती थी कि आयें और ले जायें। पर तेरी माया तो मेरी समझ में आती नहीं बेटी!"–दमयन्ती की आंखें नम थीं और सब कहने के बाद उन्हें लग रहा था कि वे बेटी से यह सब क्या कह बैठी है।

"मां, मैं भी खुशी से ससुराल जाऊंगी, पर समय आने पर। आप पिताजी को कभी पत्र नहीं लिख पायीं किन्तु मैं पुष्पा की तरह उन्हें पत्र लिखकर बुला लूंगी। मां इससे अधिक मुझसे कुछ मत पूछो। एक बात और है मां, यदि बाबूजी ने मुझसे बिना पूछे वहां पत्र लिख दिया और अपनी मर्ज़ी से मेरा गौना किया तो बाबूजी जान-बूझ कर अपनी बेटी की ज़िन्दगी ख़राब करेंगे। आप तो जानती हैं कि मैं बाबूजी का कितना सम्मान करती हूं, किन्तु इसके लिए मैं उन्हें कभी माफ़ नहीं कर पाऊंगी। हां, यदि बाबूजी मेरी सहमति से मुझे वहां भेजेंगे तो हो सकता है मेरा जीवन बिगड़ने से बच जाये।" सुशीला के स्वर में कुछ तल्ख़ी थी।

दमयन्ती ने सारी बात अगले दिन सरनाम सिंह को बतायी, पर बतायी अपनी समझ से। सरनाम सिंह की समझ में यह आया कि सुबोध सुशीला को प्यार नहीं करता, इसीलिए सुशीला सुसराल नहीं जाना चाहती। वैसे तो वे बेटी को समझाने की कोशिश भी करते, किन्तु सुशीला का वाक्य "इसके लिए मैं उन्हें कभी माफ़ नहीं कर पाऊंगी" उनके कानों में गूंजने लगता और वे अपना साहस खो बैठते। इसी प्रकार कई माह बीत गये। सुशीला की सुसराल वालों को बहाने बनाकर कब तक टाला जा सकता था। उनकी ओर से गौना जल्दी करने के लिए दबाव बढ़ने लगा। सरनाम सिंह के एक वकील मित्र थे। एक दिन बातों-बातों में उनसे ज़िक्र कर बैठे। मित्र ने शंका ज़ाहिर की कि लड़के में कोई वैसी कमी तो नहीं। जब लड़की का कहना है कि लेन-देन को लेकर उससे कोई उलाहनेबाजी हुई नहीं, घर में और सबका व्यवहार भी उसके साथ ठीक रहा तो फिर उसकी ससुराल जाने की अनिच्छा सुबोध की वैसी ख़राबी के अलावा और किसी कारण हो ही नहीं सकती। सरनाम सिंह ने बहुत कोशिश की पता लगाने की किन्तु उन्हें यही ज्ञात हुआ कि शीला तो सुबोध के बारे में ऐसी-वैसी बातें सुन ही नहीं सकती।

सरनाम सिंह के लिए समस्या बढ़ती ही गयी। तब उनके वकील मित्र ने एक दिन राय दी कि सुशीला का गौना न करने पर उसके ससुराल वाले सरनाम सिंह के विरुद्ध कानूनी कार्रवाई कर सकते हैं, इसलिए पहले से अपना बचाव करने के लिए एक कानूनी नोटिस उन्हें भेज देना चाहिए। सरनाम सिंह की कुछ भी

समझ में नहीं आ रहा था, पर अपने मित्र से कह दिया कि जैसा वह ठीक समझे, करे। बस उसमें किसी प्रकार बेटी का अहित न हो। अतः वकील साहब ने जैसा उचित समझा, वैसा नोटिस सरनाम सिंह की तरफ से भेज दिया। कुछ दिन और बीते। पता नहीं क्यों, सुशीला के ससुराल वालों ने उस नोटिस का जवाब नहीं दिया। वकील मित्र की राय से सरनाम सिंह ने तलाक़ और खर्चे का मुकद्दमा भी दायर कर दिया। एक-दो तारीखें भी पड़ीं, पर यह सब सुशीला से छिपाकर हो रहा था।

सुशीला ने इस बीच जिद करके इण्टर का फार्म भर दिया था। उसकी पढ़ने में प्रारम्भ से ही रुचि थी और जिस साल सुशीला ने हाईस्कूल की परीक्षा पास की थी, उस साल पूरे मोहल्ले की 17 लड़कियों में से न केवल उत्तीर्ण होने वाली वरन् प्रथम श्रेणी पाने वाली अकेली लड़की थी। सुशीला की अध्यापिकाओं ने भी सरनाम सिंह से यही कहा था – "यदि आप थोड़ा-सा ध्यान देते तो सुशीला की बोर्ड में कोई पोजीशन भी सम्भव थी।" किन्तु सरनाम सिंह ने अपने रूढ़िवादी विचारों के चलते सुशीला की पढ़ाई बन्द करा दी और वर ढूंढना प्रारम्भ कर दिया था। सुशीला ने पढ़ने के लिए कितना आग्रह किया, पर उसकी एक न चली। माता दमयन्ती ने भी बाबूजी का ही साथ दिया। पर अब सुशीला ने गौना करवा कर ससुराल जाने की अपेक्षा इण्टर की प्राइवेट परीक्षा देने का निश्चय किया था। कोई नहीं जानता था कि वह ऐसा क्यों कर रही थी। बस इतना था कि उसके पिता सरनाम सिंह क्या कर रहे थे, इससे बेखबर वह अपनी पढ़ाई में तल्लीन थी।

दमयन्ती यही सोचती थी कि सुबोध को उसकी बेटी पसन्द नहीं आयी। पर हैरानी उन्हें इस बात की थी कि सुशीला जैसी सुन्दर-सुशील लड़की तो ढूंढने पर भी मुश्किल से मिलती है, तब सुबोध को और क्या चाहिए था? मोहल्ले में तरह-तरह की चर्चाएं गर्म होने लगीं। उन लड़कियों के मां-बाप इन चर्चाओं में ज़ोर-शोर से हिस्सा लेते, जिनकी पुत्रियां विवाह पूर्व गर्भपात करा चुकी थीं और अब सफल पत्नियां होने का नाटक करती थीं। इसी बात को यों भी कहा जा सकता है कि इसी प्रकार के लोग अपने खोये हुए सम्मान को पुनः पाने के लिए अपनी गन्दगी दूसरों पर फेंक दिया करते हैं। एक तो सुशीला के पास व्यर्थ की इन बातों के लिए समय था ही नहीं और दूसरे, उसने तो आस-पड़ोस में आना-जाना बन्द कर दिया था। कभी-कभार कोई बात कानों में पड़ती, तो वह उन बातों की कोई परवाह न करती। वह तो एकान्त साधक की भांति अपने किसी सुनिश्चित लक्ष्य की ओर बढ़ती जाती थी जो केवल उसे ही ज्ञात था।

सुशीला ने प्रथम श्रेणी में इण्टर की परीक्षा उत्तीर्ण की। मां-बाप को लगा कि बेटी अब गौने के लिए सहमत हो जायेगी, पर ऐसा कुछ नहीं हुआ। उसने साफ-साफ कह दिया कि अभी समय नहीं आया। दमयन्ती और सरनाम सिंह हैरान थे कि उपयुक्त समय क्या होता है? पर बेटी की इच्छा के विरुद्ध कोई भी कदम उठाने का साहस वे न जुटा पाते। सुशीला ने बी. ए. का फार्म भर दिया। अब और ज़ोर-शोर से पढ़ाई में जुट गयी। मां-बाप को निश्चित हो गया कि अवश्य सुबोध को अपनी बेटी पसन्द नहीं आयी और अब वह ससुराल कभी नहीं जायेगी। वह अपने पैरों पर खड़े होने के लिए ही पढ़ रही है। अतः बार-बार उससे गौने के लिए कहना व्यर्थ है। पर सुबोध से तो उसे मुक्त कराना ही होगा। दोनों ने निर्णय किया कि वकील मित्र के अनुसार अब जल्द कार्रवाई करनी होगी।

समय कितनी तेज़ी से गुज़रता है कि सुशीला के विवाह को पांच वर्ष कब और कैसे बीत गये, किसी को पता ही नहीं चला। इस बार सुशीला ने बी. ए. की परीक्षा न केवल प्रथम श्रेणी में वरन् पोजीशन के साथ उत्तीर्ण की। माता-पिता ही क्या, सभी परिवारजनों और परिचितों की नाक ऊंची हो गयी। मोहल्ले-पड़ोस में चलने वाली चर्चाओं का बाज़ार भी कुछ ठण्डा पड़ा। मां ने कुछ उपालम्भ और कुछ विनोद के स्वर में एक दिन सुशीला से पूछा–"अब क्या करना है बेटी? क्या और पढ़ना है या खत्म हो गयी पढ़ाई।"

"अभी पढ़ना तो बहुत है, पर अपने घर जाकर। हां, आपके घर की पढ़ाई खत्म। मां क्या तुम्हें याद है कि मैंने कहा था कि गौने का समय आने पर मैं स्वयं कह दूंगी? वह समय आ गया है, आप मेरे गौने के लिए पत्र लिखवा सकती हैं।"

"क्या सच बेटी...।" दमयन्ती विस्फारित नेत्रों से सुशीला को देखती रही, जैसे उसे विश्वास ही न हो रहा हो कि सुशीला गौने के लिए राज़ी हो गयी है। कुछ देर बाद केवल इतना ही बोली "पर बेटी...।" जैसे कुछ याद आ गया हो।

"परेशान होने की कोई बात नहीं मां, यदि कोई दिक्कत हो तो पत्र डलवाने की कोई ज़रूरत नहीं। बस आपको बताना चाहती थी कि वे 15 तारीख को मुझे लेने आ रहे हैं और मैं अपने घर जा रही हूं। मां पिताजी से कह देना कि किसी भी प्रकार की औपचारिकता न करें, ऐसा कुछ बाबूजी ने किया तो उन्हें यह बिल्कुल अच्छा नहीं लगेगा।"–सुशीला ने इतने आत्म-विश्वास से कहा जैसे वह सुबोध के स्वभाव और विचारों से बहुत निकट से परिचित हो।

दमयन्ती अपनी बेटी के अपने पति के प्रति अटूट विश्वास और निष्ठा को देख कर प्रसन्न होने के बजाय कांप गयी। कैसे कहेगी वह सरनाम सिंह से? सरनाम सिंह कैसे पत्र लिखेंगे, अब सुशीला की ससुराल? क्या अब सुशीला के ससुराल वाले इसे हमारा समर्पण मानकर और ज्यादा ऐंठ नहीं दिखायेंगे? पर बेटी ससुराल जाना चाहती हो तो उसे घर भी तो नहीं बिठाया जा सकता। पति से बात

करनी तो होगी ही उसे, शायद कोई रास्ता निकले।

सरनाम सिंह से दमयन्ती ने सब कह दिया, पर उनकी हिम्मत नहीं हुई पत्र लिखने की। उनकी समझ में कुछ नहीं आया। आश्चर्य तब और ज्यादा हुआ, जब उन्हें सुबोध का पत्र मिला कि वह 15 तारीख को सुशीला को लेने आ रहा है। सुबोध ने भी अपने पत्र में लिखा था कि किसी प्रकार का लेन-देन न किया जाये और यदि ऐसा कुछ हुआ तो इसे उसका अन्तिम बार ससुराल आना भी समझा जाये। सरनाम सिंह अचम्भित थे। उन्होंने तो अपने वकील मित्र के कहने से सुबोध के पिताजी को दहेज-निरोधक कानून के अन्तर्गत नोटिस दिया था कि वे उनकी पुत्री पर और दहेज लाने के लिए दबाव डालते हैं तथा न लाने की स्थिति में जान से मार डालने की धमकी देते हैं। ऐसी स्थिति में वे अपनी पुत्री को उनके यहां भेजने में असमर्थ हैं। किन्तु सुबोध के पिताजी से तीन हज़ार रुपये महीने का सुशीला का निर्वाह-भत्ता निरन्तर भेजते रहने के लिए कहा गया था और ऐसा न करने की स्थिति में उन पर उक्त कानून के अन्तर्गत मुकद्दमा दायर करने की धमकी भी दी गयी थी। अब सरनाम सिंह को याद आ रहा था कि सुबोध के पिताजी की ओर से इस कानूनी नोटिस का भी कोई जवाब नहीं आया था। उनको समझ नहीं आ रहा था कि वे क्या करें, उन्होंने तो कुछ दिन पहले अपने वकील मित्र की राय से कोर्ट में वाकई मुकद्दमा दायर कर भी दिया था। कैसे मिला पायेंगे वे सुबोध से आंख?

सुबोध निश्चित दिन आया। सरनाम सिंह कायली के कारण सुबोध के सामने पड़ने से कतराते रहे, पर कैसे बच सकते थे? उन्हें लगा सुबोध बिल्कुल सामान्य ढंग से व्यवहार कर रहा है। सरनाम सिंह से सुबोध उस नोटिस के बारे में कुछ पूछता तो हो सकता है कि अपनी भूल के बारे में वे सब कुछ कह देते। क्या इन्हें वह नोटिस मिला नहीं...हो सकता है न मिला हो...नहीं मिला शायद...तभी उसका जवाब नहीं दिया इन लोगों ने...भगवान करे न ही मिला हो...लेकिन वह नोटिस न मिलता तो सुशीला के गौने के बारे में फिर क्यों नहीं लिखा...सुबोध ने भी कभी सुशीला को पत्र नहीं लिखा...कुछ समझ में नहीं आता...देखो कितना सामान्य है सुबोध...क्या कानूनी नोटिस पाकर भी कोई इतना सामान्य रह सकता है?...तब बात क्या है? उनकी समझ में कुछ भी नहीं आया। पर उस दिन दमयन्ती ने अपनी बेटी के चेहरे पर वे सब भाव पहली बार पढ़े, जिन्हें पढ़ने के लिए वह इतने दिनों से तरस रही थी। सुबोध को भी जब मौका मिला, उसने कनखियों से सुशीला को देखने और उससे इशारों में कुछ कहने की कोशिश की। दमयन्ती इसी से सन्तुष्ट थी। दामाद बेटी को प्यार करता है, मां को इससे अधिक और क्या चाहिए...।

सुबोध के साथ जाने के लिए तैयार होते समय हिम्मत करके मां ने पूछा—"यह सब कैसे और क्यों हुआ बेटी, कुछ बता तो सही।"

"मां, शादी के समय बाबूजी ने एक ऐसा झूठ बोला था, जैसा शायद हर पिता बोलता है, बिना यह सोचे कि उसके झूठ का बेटी के जीवन पर प्रभाव पड़ सकता है। पिताजी ने यह कहने के बजाय कि उनकी लड़की हाईस्कूल पास है, मुझे बी. ए. पास बता दिया। शादी के लिए उन सबकी यही एक शर्त थी। उनको दहेज नहीं चाहिए था और न बाबूजी से उन्होंने कुछ मांगा। उन्होंने ही मुझे यह सब बताया था। जब उन्होंने मेरी पढ़ाई के बारे में पूछा तो मैंने सच-सच बता दिया कि मैं तो हाईस्कूल पास हूं। क्या पति से झूठ बोलना चाहिए? हो सकता है कि उस समय मेरा सम्मान बच जाता किन्तु क्या पति से इस झूठ को छिपाकर पूरे जीवन उसका प्यार पाया जा सकता है? मां, आप जरा निष्पक्ष होकर सोचो कि मेरी शादी उनके साथ हो जाये, इसलिए झूठ बोला बाबूजी ने और जब मैंने जाने से इन्कार किया तो एक बार फिर बाबूजी ने उन पर झूठा इल्ज़ाम लगाया कि मुझसे दहेज लाने और न लाने पर मार डालने की धमकी देते हैं और उनसे मेरी जान को ख़तरा है। दोषी कौन हुआ मां? दहेज विरोधी कानून क्या मां, वर पक्ष को सताने के लिए बनाया गया है या वास्तव में लालची और दुष्ट लोगों से लड़की को बचाने के लिए? जानती हो मां, कुछ

मामलों को छोड़कर बाकी में गलत-फहमी या बदला लेने या बेटी के खराब चाल-चलन पर पर्दा डालने के लिए वर पक्ष के विरुद्ध इसका गलत प्रयोग किया जा रहा है। बाबूजी ने भी ऐसा ही करने का प्रयास किया। मैंने जब इनसे सुना कि बाबूजी ने मुझे बी.ए. बताकर मेरी शादी इनसे की है तो तत्काल अपने इस निर्णय के बारे में मैंने इन्हें भी बता दिया था।''

दमयन्ती सकुचा गयी। शादी के समय हर लड़की वाला और हर लड़के वाला शिक्षा, सम्पत्ति, नौकरी और गुणों को बढ़ा-चढ़ाकर ही बताते हैं, दमयन्ती को इसमें कोई दोष प्रतीत नहीं हुआ। यह तो चिरकाल से चली आ रही एक परम्परा है। कहने वाला और सुनने वाला दोनों जानते हैं कि सब गलत और केवल दोनों पक्षों की प्रतिष्ठा बनाये रखने के लिए है। जब दमयन्ती का विवाह सरनाम सिंह से हुआ था तो उसके पिताजी ने भी उसे मिडिल पास बताया था और इस बात को सुनकर सरनाम सिंह के पिताजी ने कहा था—''अजी हमें कौन-सी नौकरी करानी है, बस चिट्ठी-पत्री लिखना और पढ़ना आना चाहिए। यानी दमयन्ती के अनुसार यदि सरनाम सिंह ने सुबोध के पिताजी से कह दिया कि सुशीला बी. ए. पास है तो गलती उन्हीं की है जिन्होंने इस बात को सत्य समझ लिया। हां, अगर पता होता कि अपनी ही बेटी प्रतिज्ञा के कारण नहीं जाना चाहती तो वे नोटिस-वोटिस के चक्कर में न पड़ते।

दमयन्ती बोली—''शायद तेरे बाबूजी ने गलती की हो पर तेरी भलाई सोचकर ही किया न, सब कुछ?''

सारी कड़वाहट सुशीला के ओठों पर उतर आयी—''ठीक है मां, बाप तो बेटी का विवाह कर गंगा नहा लेता है, अतः उसे सिर्फ एक बार झूठ बोलना पड़ता है। पर लड़की को पूरा जीवन जिसके साथ गुज़ारना है, उससे झूट नहीं बोल सकती। खैर, बाबू जी ने मुझे बी. ए. पास बताया था, आज उसे पूरा कर दिया है मैंने। मां शायद तुम्हें लगता ही नहीं कि बाबूजी के झूठ से मेरा कुछ बुरा हुआ भी है। ये लोग भले न होते तो तुम्हें पता चलता कि बाप का एक झूठ बेटी के लिए दुख के कितने बीज बो सकता है। जब बाबूजी ने कानूनी नोटिस दिया तो मैंने इन्हें लिख दिया था कि उसे गम्भीरता से न लें। मां बाबूजी से इतना तो कह ही देना कि उन्होंने जो एक झूठा मुकद्दमा इनके खिलाफ दायर किया है, उसे वापस ले लें। बाबूजी समझते हों कि अपने पति के विरुद्ध एक झूठे मुकद्दमे में मैं उनका साथ दूंगी, सो नहीं हो सकता। अपनी अन्तिम सांस तक साथ तो इन्हीं का दूंगी मैं।'' □

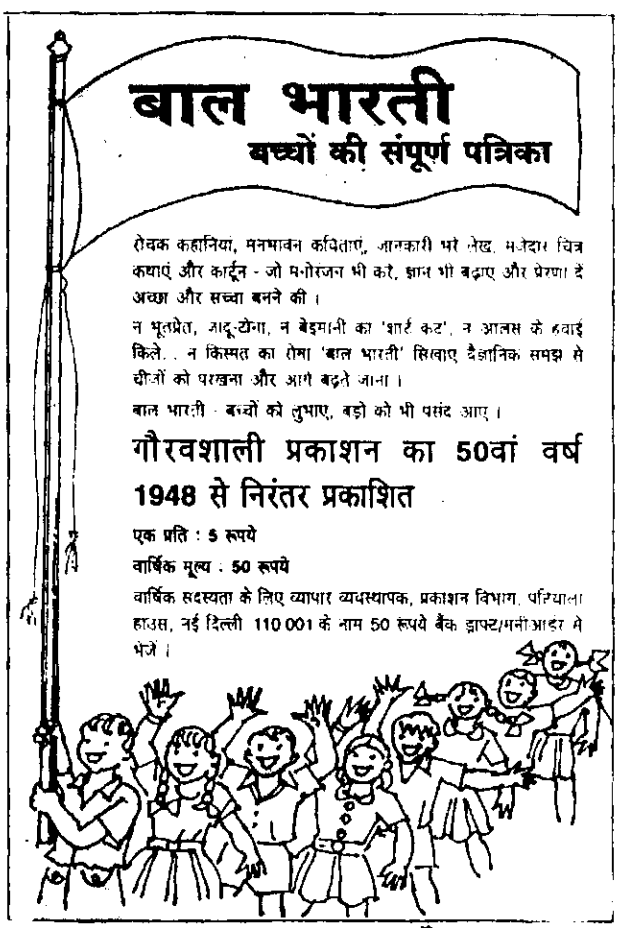

आज के समय में गांधी जी की प्रासंगिकता

डा. दुर्गादास शर्मा*

किसी कवि ने गांधी जी के बारे में कितना सुन्दर कहा था :

वह मनमोहन के मोहन थे,
भारत का भाग्य जगाया था।
जब 'चक्र सुदर्शन' की भांति
चरखे का चक्र चलाया था।।

शांति और अहिंसा के पुजारी महात्मा गांधी ऐसे व्यक्ति थे जिनकी जीवन के सामाजिक एवं आर्थिक पहलुओं में गहरी अन्तर्दृष्टि थी। ग्रामीण पुनर्निर्माण को देश के विकास की सीढ़ी मानने वाले बापू ईश्वर की सभी रचनाओं में सामंजस्य स्थापित करने का प्रयास करते थे। उनका लक्ष्य केवल भौतिकवाद का ही नहीं, बल्कि भारतीय जनता के सर्वांगीण विकास का था जिसकी शुरुआत अंतिम व्यक्ति के उत्थान से होती है। यदि हम गांधीजी की दृष्टि से विकास की समीक्षा करना चाहें, तो यही उसकी मुख्य कसौटी होगी।

आज हम आज़ाद भारत की 50वीं वर्षगांठ मना रहे हैं। निस्संदेह अब भारत की गिनती विश्व के गिने-चुने देशों में होती है। विकास, विज्ञान और टेक्नोलाजी के क्षेत्र में हम दुनिया के अग्रणी देशों में हैं। खाद्यान्न में न केवल हम आत्म-निर्भर हैं बल्कि दूसरे देशों को भी अन्न भेजने में समर्थ हैं। फिर भी समझ में नहीं आता कि हम विदेशी कर्जों में दिनोंदिन क्यों जकड़ते जा रहे हैं? महंगाई, गरीबी तथा बेरोजगारी गगन को छू रही है। आठवीं पंचवर्षीय योजना समाप्त हो गई है और नौवीं योजना शुरू हो गई है। इसके बावजूद भी ग्रामीण क्षेत्रों का समुचित विकास अभी तक नहीं हो पाया है।

कहीं हम गांधी जी द्वारा दिखाए गए रास्ते से विचलित तो नहीं हो गए हैं? अतः यह विश्लेषण करना आवश्यक हो जाता है कि उनके विचारों की आज के युग में क्या प्रासांगिकता है।

गांधी जी का मानना था कि देश का आर्थिक भविष्य ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था पर आधारित होना चाहिए, गांवों में आत्मनिर्भरता आए। प्रत्येक गांव एक गणतन्त्र की तरह हो। उसकी एक पंचायत हो जो लोगों की समस्याओं का निपटारा करे। वे दरिद्रनारायण पर पड़ने वाले प्रभाव को ही विकास की कसौटी मानते थे। वे लोगों में स्वदेशी की भावना जाग्रत करना चाहते थे। इसके लिए उन्होंने हाथ से कपड़ा बुनना, ऊनी कम्बल बनाना, प्रौढ़ शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य एवं आरोग्य शास्त्र की शिक्षा, नशाबन्दी, छुआछूत दूर करना साम्प्रदायिक शांति, मातृभाषा का प्रसार जैसे अनेक कार्यक्रम तैयार किए थे।

उनका कथन कि 'भारत का मोक्ष उसके लघु तथा कुटीर उद्योगों में निहित है'—आज भी प्रासंगिक है। लघु तथा कुटीर उद्योगों में कम-से-कम पूंजी लगाकर भी अधिक लोगों को रोजगार दिया जाना सम्भव है। ऐसा देखा गया है कि जहां बड़े उद्योग की एक इकाई में एक लाख रुपये के विनियोग से केवल चार बेकार लोगों को रोजगार मिलता है, वहीं उतने ही विनियोग से ग्रामीण क्षेत्रों में लगभग 70 व्यक्तियों को रोजगार दिया जा सकता है; साथ में छोटे उद्योगों की स्थापना से महिला श्रम का सदुपयोग भी हो जाता है और बड़े उद्योगों की तरह इन पर तेजी या मंदी का भी कोई ज्यादा असर नहीं पड़ता है।

आज ग्रामीण बेरोजगारों का शहरों की ओर पलायन एक गंभीर चुनौती बन गया है। लघु और कुटीर उद्योगों के अभाव में ग्रामीण का शहरों की ओर पलायन जहां 1951 में शहरी जनसंख्या का 17.3 प्रतिशत था, वहीं 1993 में बढ़कर 25.73 प्रतिशत हो गया जो निरन्तर बढ़ता जा रहा है। परिणामस्वरूप, इससे शहरों के साथ प्रदूषण जैसी नई-नई समस्याएं खड़ी हो गई हैं। यदि गांवों में ही लघु तथा कुटीर उद्योग लगाए गए होते तो शायद यह समस्या न आती और बेरोजगारी कम होने के अलावा लोगों को शहरों की ओर पलायन न करना पड़ता। गांधी जी एक वर्णहीन, शोषणरहित, शांतिपूर्ण लोकतांत्रिक समाज के हिमायती थे। उन्होंने कहा था कि मैं एक ऐसे भारत की रचना करना चाहूंगा जिसमें ऊंच-नीच का भेदभाव न हो; सभी वर्ग प्रेम से रह सकें; छुआछूत, मद्यपान तथा नशीली वस्तुओं के सेवन हेतु कोई स्थान न हो। महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार मिलें। विश्व के सभी देशों के साथ हमारे मैत्रीपूर्ण संबंध हों, न हम किसी का शोषण करें और न ही कोई हमारा शोषण करे। व्यक्ति की जाति उसकी कार्य-कुशलता के आधार पर निश्चित हो। ऐसे समाज की रचना का आधार सत्य, अहिंसा, प्रेम और न्याय होगा। लेकिन क्या हम उनके इस सपनों को साकार कर सके हैं? आज भी छुआछूत विद्यमान है। युवाओं के मद्यपान एवं नशीली दवाओं के सेवन से राष्ट्र की शक्ति क्षीण हुई है। महिलाओं

*सहायक प्राध्यापक (विस्तार शिक्षा), सामाजिक विज्ञान विभाग, डा. यशवन्त सिंह परमार औद्यानिकी एवं वानिकी विश्वविद्यालय, सोलन (हि.प्र.)

पर आगजनी, हत्या, दहेज प्रथा, बलात्कार जैसे अत्याचार दिनों-दिन बढ़ते जा रहे हैं।

श्रम के महत्व को स्वीकारते हुए गांधी जी का विचार था कि हरेक इंसान को चाहिए कि वह कुछ-न-कुछ शारीरिक श्रम करके रोटी कमाए। श्रम भी ऐसा जो जीवनोपयोगी हो, देश-काल की आवश्यकता के अनुरूप हो तथा जिसके परिमाण का हिसाब आसानी से लगाया जा सके। बाइबिल को उद्धृत करते हुए वह कहते थे कि 'तू अपनी भौंहों के पसीने से अपना भोजन पाएगा।' परन्तु अफसोस! हमने अभी तक श्रम के महत्व को नहीं पहचाना।

श्रम और पूंजी में वैवाहिक सम्बन्ध जैसा मेल होना चाहिए। इसी बात के मद्देनजर उन्होंने पूंजीपतियों को सलाह दी कि वे अपनी धन-संपत्ति को जनता की धरोहर समझें और मजदूरों को सलाह दी कि वे अपने काम को निष्ठा से करते हुए देश का नव-निर्माण करें। आज के हालात इसके विपरीत हैं। असत्य, हिंसा, शोषण, ठगी और फरेब का बोलबाला है। जिसके पास जितना अधिक पैसा है, वह उतना ही बड़ा शोषक है।

विकास, विज्ञान और टेकनोलाजी के क्षेत्र में हम दुनिया के अग्रणी देशों में से एक हैं। खाद्यान्न में न केवल हम आत्मनिर्भर हैं बल्कि दूसरे देशों को भी अन्न भेजने में समर्थ हैं। फिर भी, समझ में नहीं आता कि हम विदेशी कर्जों में दिनोंदिन क्यों जकड़ते जा रहे हैं?

गांधी जी के विचार में गांवों में पारस्परिक व्यवहार के लिए धातु के सिक्के या किसी अन्य कृत्रिम माप के बजाय कोई ऐसी चीज होनी चाहिए जिसे हर कोई बना सके, जिसका दाम रोजाना न बदले और जिसे आसानी से संग्रह किया जा सके। उदाहरणार्थ– 'सूत'। यह प्रयोग अव्यावहारिक नहीं कहा जा सकता। थोड़ी-सी मेहनत करने पर यदि इसे क्रियान्वित किया जाए तो इसमें हमें बहुत बड़ी सफलता मिल सकती है जो ग्रामीण विकास का आधार साबित हो सकती है।

निस्संदेह, गांधी जी कुटीर उद्योगों के प्रबल समर्थक थे, किन्तु जहां मजदूरों की कमी हो, वहां वे औद्योगीकरण के समर्थक थे। उनका कहना था कि मैं ऐसी मशीन का स्वागत करूंगा जो झोंपड़ों में रहने वाले करोड़ों मनुष्यों के बोझ को हल्का करती है। उनके कथनानुसार किसी भी उद्योग को भारतीय उद्योग तभी कहा जा सकता है जब यह सिद्ध हो जाए कि वह भारत के करोड़ों जन-समुदाय के लिए हितकारी है और उसमें काम करने वाले कुशल तकनीशियन तथा मजदूर, दोनों ही भारतीय हैं। उस कारखाने के निर्माण में जो भी पूंजी लगाई जाए, वह भारतीय होनी चाहिए और यथासम्भव उसमें लगे यंत्र भी भारत में बने होने चाहिए। औद्योगीकरण से ग्रामीणों का बड़े पैमाने पर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से शोषण अवश्य होगा क्योंकि इससे प्रतियोगिता बढ़ेगी और उत्पादित माल बाजारों में खपाने की समस्या पैदा होगी।

प्रान्तीयता की भावना को देखकर गांधी जी को बेहद कष्ट होता था। उनका कहना था कि सब प्रदेशों के लोग भारत के हैं, कोई भी भारतवासी किसी भी प्रदेश में जाकर बस सकता है, बशर्ते कि वह वहां के लोगों का शोषण न करे, न उन पर शासन करे और न ही उनके हितों को कोई हानि पहुंचाए। लेकिन इसके विपरीत आज जगह-जगह पृथकतावाद-अलगाववाद के नारे गूंज रहे हैं। यदि आज गांधी जी जिन्दा होते तो क्या ऐसा होने देते? शायद नहीं। बल्कि वह तो एक ऐसी भूमि-सेना बनाने की सोच रहे थे जो केवल देश निर्माण में ही नहीं अपितु सशस्त्र पुलिस की जगह ले। यह सेना केवल सड़कें, नहरें, नालियां बनाने और अधिकाधिक अन्न उत्पादन में ही सहायता नहीं करती; जनता को अनुशासन सिखाने और सफाई के नियमों का सख्ती से पालन कराने का काम भी करती, जिसके फलस्वरूप राष्ट्र से अनुशासनहीनता समाप्त हो जाती। पर क्या हम गांधी जी की इस सोच को अन्जाम दे सके हैं?

देश के आर्थिक जीवन को गांव-स्वावलम्बन की संज्ञा देने वाले बापू का कहना था कि जनता से टैक्स 'श्रम' या 'जिन्स' के रूप में लिया जाए, जिसका अधिकांश भाग गांव में ही रहेगा। गांववासी या मजदूर श्रम के भुगतान के रूप में इसका धन की जगह सदुपयोग कर सकते हैं। इस तरह गांव की उन्नति की योजनाएं किसी बाहरी आर्थिक सहायता के बिना गांव में ही पूरी हो सकती हैं। सरकार द्वारा शुरू किया गया 'काम के बदले अनाज' कार्यक्रम इसी सोच का परिणाम था।

बापू की अर्थ-नीति में ग्रामीण इकाई का प्रमुख स्थान था। वे कहते थे कि 'वास्तविक भारत गांवों में बसता है। शहरों ने बेरहमी के साथ गांवों का शोषण किया है। हमारे गांव उस समय निर्धन बन गए जब शहर विदेशी वस्तुओं के विक्रय-केन्द्र बन गए और शहर वालों ने सस्ती तथा भद्दी चीजें बेच कर गांव वालों का शोषण शुरू कर दिया। गांव वालों को मूर्ख, अनाड़ी, अनपढ़ समझ कर नफरत भरी निगाहों से देखने वाले शहरी लोगों को चुनौती देते हुए गांधी जी कहते थे– 'जाओ, गांवों में जाकर रहो, गांव वालों को जो खाना नसीब होता है, उसे खा कर पेट भरने का प्रयत्न करो। महीने भर बाद तुम देखोगे कि तुम निर्जीव हो रहे हो और तुम्हारा दम टूट रहा है।'

गांधी जी के विचार में 'वकील, डाक्टर, सफाई कर्मचारी आदि सभी समान पारिश्रमिक पाने के अधिकारी हैं, लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि सबको एक समान रकम दी जाए। इसका अभिप्राय यह है कि प्रत्येक को उसकी जरूरत की रकम मिलनी चाहिए, परन्तु

यदि अकेला आदमी किसी चार बच्चों वाले दूसरे व्यक्ति के बराबर मांग करता है, तो उसे आर्थिक समानता को भंग करने वाला माना जाएगा।' उनकी इसी विचारधारा को आज नजरअन्दाज करने का परिणाम हमें स्पष्टतया आर्थिक विषमता में देखने को मिलता है। धनी बहुत अधिक धनवान एवं गरीब ज्यादा गरीब होते जा रहे हैं। भुखमरी और कुपोषण में वृद्धि हुई है। एक तरफ तो निर्धनों के बच्चे भूख से दम तोड़ रहे हैं, लेकिन दूसरी ओर धनवानों के कुत्ते दूध-बिस्कुट, चावल-दही खाकर सोफे पर आराम से सुख की नींद सोते हैं। उन्होंने कितना स्पष्ट कहा था 'धनी के घर उसके लिए अनावश्यक चीजें पड़ी रहती हैं, मारी-मारी फिरती हैं, जबकि उसके अभाव में करोड़ों निर्धन व्यक्ति भटकते फिरते हैं, जाड़े में ठिठुरते हैं। यदि सब लोग अपनी जरूरत भर का ही संग्रह करें, तो किसी को किसी प्रकार की तंगी न हो, सबको सन्तोष हो।' उनके मतानुसार देश के उच्च वर्ग को ऐसी किसी भी सुविधा का, सुख का उपभोग नहीं करना चाहिए, जो सभी देशवासियों को उपलब्ध नहीं है। जब ऊपर के 15 प्रतिशत लोग उन बुनियादी सुविधाओं को भी त्याग देंगे जो 85 प्रतिशत लोगों को भी प्राप्त नहीं है तो योजना बनाने वालों और उसे लागू करने वालों में एक बेचैनी पैदा होगी और वे उन बुनियादी अभावों की शीघ्रातिशीघ्र पूर्ति करने को बाध्य होंगे।

गांधी जी ने कहा था कि मैं एक ऐसे भारत की रचना करना चाहूंगा जिसमें ऊंच-नीच का भेदभाव न हो; सभी वर्ग प्रेम से रह सकें; छुआछूत, मद्यपान तथा नशीली वस्तुओं के सेवन हेतु कोई स्थान न हो। महिलाओं को पुरुषों के समान अधिकार मिलें। विश्व के सभी देशों के साथ हमारे मैत्रीपूर्ण संबंध हों, न हम किसी का शोषण करें और न ही कोई हमारा शोषण करे। व्यक्ति की जाति उसकी कार्य-कुशलता के आधार पर ही निश्चित हो।

इंग्लैण्ड और दक्षिण अफ्रीका में अपने प्रवास के अनुभवों के आधार पर गांधी जी इस परिणाम पर पहुंचे थे कि पश्चिमी सभ्यता मानव-जाति के लिए एक अभिशाप है। यह बात उन्होंने 1908-09 में लिखी अपनी मौलिक कृति 'हिन्द-स्वराज' में कही थी। आज 21वीं सदी आते-आते इसकी सच्चाई हमारे सामने है। बिस्तर पर रोग से पीड़ित अपने माता-पिता या किसी अन्य बुजुर्ग की कराहट पर ध्यान देने के बजाय आज की युवा-पीढ़ी डिस्को-डांस या स्टार टी.वी. पर संगीत की मधुर आवाज सुनना पसन्द करती है। ओह! हममें कितना बदलाव आ गया है?

बापू के विचार में केन्द्रीकरण से युद्धों और हिंसा को बढ़ावा मिलता है, अतः अहिंसात्मक प्रणाली के समुचित विकास के लिए वे इसका परित्याग करना जरूरी समझते थे। वे इस बात पर भी बल देते थे कि सहायक कल-पुर्जों का उत्पादन जापान की तरह विकेन्द्रीकृत आधार पर किया जाए। सरकार द्वारा ग्रामीण स्तर तक राजनीतिक तथा आर्थिक सत्ता के मार्ग को प्रशस्त करने के लिए लाया गया 73वां संविधान संशोधन अधिनियम एक सराहनीय कदम है, बशर्ते कि राजनैतिक दृष्टि से विकेन्द्रीकृत 'पंचायती राज' आर्थिक दृष्टि से भी ग्राम स्वराज बने। आशा की जानी चाहिए कि इस कदम से प्रत्येक गांव में स्वराज लाने का गांधी जी का सपना साकार होगा।

आज इस तथ्य को नकारा नहीं जा सकता कि देश में विषमता की खाई उत्तरोत्तर बढ़ती जा रही है। हमारी जनसंख्या का एक बड़ा भाग अभी-भी गरीबी-रेखा से नीचे जीवन-यापन कर रहा है। जब तक उत्पादन और आवश्यकता का ताल-मेल नहीं बैठता, गरीबी मिटाने की बात सोचना बेमानी होगी। इसके लिए सर्वप्रथम हमें असमानता और अल्प-विकास जैसी बाधाओं का सामना करते हुए देश को विदेशी कर्जों के बोझ से मुक्त करना होगा और उसे आत्म-निर्भर बनाना होगा। गांधी जी के अनुसार "आर्थिक समानता का सच्चा अर्थ है--सब मनुष्यों के पास समान सम्पत्ति का होना अर्थात् इतना पैसा होना जिससे उनकी कुदरती आवश्यकताएं पूरी हो सकें।" लेकिन आजादी के बाद पिछले पचास वर्षों में क्या ऐसा हो पाया? शायद नहीं।

जिस संकट काल से आज राष्ट्र गुजर रहा है, उसे देखते हुए हमें अपनी रचनात्मक शक्ति, राष्ट्रीय चरित्र तथा दायित्व बोध की भावना को जाग्रत करने की परम आवश्यकता है, जिसका सही मार्ग गांधीवाद ही है। □

लेखकों से

'कुरुक्षेत्र' के लिए मौलिक लेख, कहानी, कविता, संस्मरण, लघुकथा आदि रचनाएं टाइप कराकर दो प्रतियों में भेजिये। रचनाओं के साथ मौलिकता का प्रमाणपत्र संलग्न होना चाहिए। जिन रचनाओं के साथ ऐसा प्रमाणपत्र संलग्न नहीं होगा, उन्हें स्वीकार नहीं किया जा सकेगा। अस्वीकृत रचना लौटाने के लिए कृपया डाक टिकट लगा और अपना पता लिखा लिफाफा लगाना न भूलें। सभी रचनाएं संपादक, 'कुरुक्षेत्र' ग्रामीण क्षेत्र और रोजगार मंत्रालय, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजें। **–सम्पादक**

अ नु वि नि

प्रस्ताव

राज्य स्तर की अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति
निगमों तथा अन्य अधिकृत अभिकरणों के माध्यम से गरीबी रेखा की सीमा से दुगुने तक
की आय वाले अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के लिए आय एवं रोजगारोन्मुख अवसर
उत्पन्न करने के लिए कृषि, यातायात, सेवा क्षेत्र, बागवानी, पशुपालन, लघु उद्योग
जैसी व्यवहार्य योजनाओं को मंजूर करते हुए अनुसूचित जाति एवं
अनुसूचित जनजाति वर्ग को ब्याज की
रियायती दरों पर वित्तीय
सहायता प्रदान
की जा
रही है।

****

31 अगस्त, 1997 को 874.46 करोड़ रुपये की 1,126 योजनाएं मंजूर
की गईं जिसमें निगम का 535.70 करोड़ रुपये का सहयोग रहा। 2.14 लाख लाभग्राहियों को लाभ
देते हुए संचयी निबल वितरण 349.888 करोड़ रुपये बढ़ा।

****

8,267 अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति के लाभग्राहियों को लाभ
देते हुए 203 प्रशिक्षण कार्यक्रम स्वीकृत किए।

****

कृपया विस्तृत विवरण हेतु सम्पर्क करें :
राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वित्त एवं विकास निगम,
(भारत सरकार का उपक्रम)
8, बालाजी एस्टेट, गुरु रविदास मार्ग, कालकाजी,
नई दिल्ली-110019
टेलीफोन नं. : 6468936, 38, 40, 46
6227659, 69, 6473115, 16
फैक्स : (011) 6468943

अथवा

संबंधित राज्य के अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति वित्त निगम

****

लघु और कुटीर उद्योगों के बारे में गांधी जी के विचार

डा. बृज बहादुर सिंह*

भारत में प्राचीन काल से ही कुटीर उद्योगों का जाल फैला हुआ था जो कि अर्थ-व्यवस्था के स्वावलंबन की रीढ़ थे परन्तु अंग्रेजी शासन काल में विदेशियों ने स्वार्थवश कुटीर उद्योगों को सुनियोजित तरीके से नष्ट करके भारतीय अर्थ-व्यवस्था को चौपट कर दिया। राष्ट्रीय आंदोलन के दौरान समय-समय पर कुटीर उद्योगों की आवश्यकता पर बल दिया जाता रहा। गांधी जी के शब्दों में, "भारत का कल्याण कुटीर उद्योग में निहित है।"

कुटीर उद्योग से तात्पर्य था—ग्रामोद्योग। दैनिक आवश्यकताओं की वस्तुएं गांव में ही तैयार की जानी चाहिए और जहां तक संभव हो, गांवों को आत्म-निर्भर बनाने की दिशा में कार्य करना चाहिए, जिससे नगरों पर निर्भरता कम हो और गांवों की दयनीय दशा को सुधार कर उन्हें स्वावलंबी बनाया जा सके। यही गांधी जी के चिंतन का लक्ष्य था। भारतीय गांवों की दरिद्रता का उन्मूलन करने, नगर और ग्राम की आय में विषमता दूर करने, स्वदेशी उद्योगों के संरक्षण तथा विकास के लिए गांधी जी ने ग्रामोद्योगों के पुनरुथान एवं पुनरुद्धार का प्रयत्न किया। स्वतंत्र भारत में आज के व्यावसायिक ढांचे तथा बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के स्थान पर वह एक विकेन्द्रीकृत ग्रामीण व्यवस्था का निर्माण करना चाहते थे ताकि नगरों द्वारा गांवों के संसाधनों का शोषण न हो।

देश की बढ़ती जनसंख्या और बेरोजगारी के लिए छोटे-छोटे उद्योग-धंधे ही कारगर हो सकते हैं जिनसे आय और सम्पत्ति का समान वितरण सुनिश्चित करके गांवों की खुशहाली बहाल की जा सके।

गांधी जी का कहना, "यदि मेरा सपना पूरा हो जाए, तो भारत के सात लाख गांवों में से प्रत्येक गांव समृद्ध प्रजातंत्र बन जाएगा, उस प्रजातंत्र का कोई व्यक्ति अनपढ़ न रहेगा और कार्य के अभाव में कोई बेकार भी नहीं रहेगा बल्कि किसी न किसी कमाऊ धन्धे में लगा होगा।"

ब्रिटिश काल के पूर्व, भारत की उद्योग व्यवस्था कुटीर उद्योगों पर आधारित थी परन्तु अंग्रेजों ने अपनी अर्थ-व्यवस्था को सुदृढ़ करने की नीयत से भारतीय बाजार व्यवस्था को नष्ट करके लंकाशायर और मैनचेस्टर में बनी वस्तुओं की बिक्री के लिए, भारतीय बाजार पर आधिपत्य किया। यहां तक कि ढाका की प्रसिद्ध मलमल भी उपेक्षा की शिकार हो गई। चौपट हुई भारतीय अर्थ-व्यवस्था के संबंध में विनोबा भावे का कथन बड़ा सटीक है कि "पहले अन्य अनेक राज्य हुए तो भी देहात का यह असली स्वराज्य नष्ट नहीं हुआ था, इसलिए हमें रोटियों के लाले नहीं पड़े। परन्तु अंग्रेजी राज में यह खादी स्वराज्य, देहाती उद्योग धन्धे का स्वराज्य नष्ट हो गया इसलिए देहात वीरान और डरावने दिखाई देने लगे।"

गांधी जी गांव में प्राचीन काल के कृषि, कताई, बुनाई, पिटाई, लुहारगिरी, बढ़ईगिरी और कागज बनाना, मधुमक्खी पालन, रेशम के कीड़े पालना, चमड़ा कमाना, खिलौने बनाना आदि धंधों का यथासंभव अधिकाधिक प्रसार करने के पक्षपाती थे। इनमें भी वे कताई-बुनाई पर अत्यधिक जोर देते थे। वस्तुतः ग्रामोद्योग के सौर मंडल में खादी उद्योग पहले की भांति ही है। उस पर जो भी धन व्यय किया जाता है, वह कपास उगाने वालों, धुनने वालों, जुलाहों, रंगने वालों, धोबियों आदि में बंट जाता है। इस प्रकार यह धन समान वितरण का उत्तम साधन है। इस उद्योग की एक विशेषता यह है कि इससे ग्रामीणों को खाली समय में रोजगार मिल सकता है। कोई व्यक्ति कहीं भी चरखा चला सकता है। इस तरह स्वावलंबन गांधी नीति का मूलमंत्र था। इसके बावजूद उन्होंने प्रत्येक गांव में उद्योग-धंधों के प्रचलन पर बल दिया था। उनके मतानुसार, कुटीर उद्योगों द्वारा गांवों की समस्त आधारभूत आवश्यकताएं पूरी हो सकेंगी और शनैः शनैः वे आत्म-निर्भरता की दिशा में कदम बढ़ाएंगे।

गांधी जी बड़े उद्योगों या बुनियादी उद्योगों के विरोधी थे, ऐसा नहीं है। परन्तु वे कुटीर उद्योग की कीमत पर बड़े उद्योग के पक्षधर नहीं थे। उनका सुस्पष्ट मत था कि साधारण लोगों की आवश्यकता की वस्तुओं को तैयार करने वाले उद्योगों का विकेन्द्रीकरण होना

*अध्यक्ष, अंग्रेजी विभाग, राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय, महमूदाबाद (सीतापुर)

चाहिए। उनकी दृष्टि में, भारतीय परिदृश्य में केवल भारी यांत्रिक उद्योगवाद से समस्या नहीं सुलझ सकती। कृषि-प्रधान भारत का उज्ज्वल भविष्य तो ग्रामोद्योग से ही संभव है। कुटीर उद्योगों के समन्वित विकास से नगरों की ओर भागने की समस्या भी सुलझ सकती है। इससे ग्रामीणों को भी प्राकृतिक वातावरण में जीने का अवसर सुलभ हो जाता है। महानगरों के कृत्रिम जीवन से दूर, मन अपने परिवार के साथ रहता है। इससे आधुनिक सभ्यता के प्रवाह में उजड़ते गांवों की भी रक्षा हो जाएगी। खेती और कुटीर उद्योग के सहज समन्वय के फलस्वरूप गांवों में व्याप्त बेकारी, सामाजिक, आर्थिक तथा स्वास्थ्य संबंधी असंख्य समस्याओं का निदान हो सकेगा। यहां पर आधुनिक उद्योग के सर्वोच्च प्रणेता हेनरी फोर्ड के शब्दों का उल्लेख उचित प्रतीत होता है कि, "डेटायट में स्थित मेरा विशाल कारखाना एक मृतप्रायः दानव की भांति है।" उसके स्थान पर वे अनेक छोटी-मोटी विद्युत चालित निर्माण शालाओं की स्थापना की बात सोचने लगे थे। संसद में गांधी जी की कुटीर उद्योग प्रधान अर्थ-व्यवस्था के स्वप्न को व्यावहारिक स्वरूप देने के विषय में प्रमुख समाजवादी चिंतक राममनोहर लोहिया ने छोटी मशीन की उत्पादन प्रणाली का सुझाव दिया था।

लघु उद्योगों को सुदृढ़ बनाने के लिए भारत सरकार ने 1991 में नई लघु औद्योगिक नीति की घोषणा की जिसके फलस्वरूप लघु उद्योग क्षेत्र का विस्तार हुआ और कुटीर उद्योगों को नये आयाम मिले। इस क्षेत्र में रोजगार तथा आय के नये और पर्याप्त अवसर उत्पन्न हुए। फिर भी इस क्षेत्र को अपेक्षित सफलता नहीं मिली। इसके प्रमुख कारण हैं- कच्चे माल की पर्याप्त तथा सामयिक पूर्ति न होना, विद्युत आपूर्ति का बाधित रहना, वितरण की समस्या तथा परम्परागत उत्पादन तकनीक। गांधी जी का कथन, "किसी भी विदेशी उद्योग को भारतीय तभी कहा जाएगा, जब यह सिद्ध हो जाए कि यह भारत के करोड़ों जन-समुदाय के लिए हितकारी है और उसमें, कार्य करने वाले कुशल तकनीशियन और मजदूर -दोनों भारतीय हैं, उस कारखाने में जो पूंजी लगायी जाए, वह भी भारतीय होनी चाहिए। जहां तक संभव हो, उस कारखाने में यंत्र भी भारत में बने होने चाहिए।"

उपर्युक्त परिप्रेक्ष्य में, देश की बढ़ती जनसंख्या और बेरोजगारी की समस्या के समाधान के लिए छोटे-छोटे उद्योग-धंधे ही कारगर हो सकते हैं जिनसे आय और सम्पत्ति का समान वितरण सुनिश्चित करके गांवों की खुशहाली बहाल की जा सके। ऐसे कार्यक्रमों के क्रियान्वयन से भारत के गांवों में बिखरे कारीगरों को उनकी झोपड़ियों में काम के अवसर जुटाने में हमारे कुटीर उद्योग एक प्रमुख भूमिका निभा सकते हैं। समय की मांग है कि इन उद्योगों के नन्हे क्षेत्र को सशक्त करने के लिए जरूरी समर्थन दिया जाए ताकि नगरों की ओर ग्रामीण जन-धन के प्रवाह को रोका जा सके।

इसी संबंध में प्रो. गुन्नार मिरडल के कथन को उद्धृत कर सकते हैं, "दक्षिण एशिया के देश अब पश्चिमी ढंग के अत्यधिक संगठित उद्योगों के उन छोटे-छोटे द्वीपों के सृजन का खतरा उठा रहे हैं, जो अवरोध के समुद्र से घिरे रहेंगे।"

वर्तमान समय में, गांधी-चिंतन को जिस प्रकार उपेक्षा का शिकार होना पड़ा है, उसी के परिणामस्वरूप देश को स्वतंत्रता के 50 वर्षों बाद भी निर्धनता, बेकारी, अराजकता जैसी अनेक समस्याओं से जूझना पड़ रहा है। यदि कुटीर उद्योगों के विकास पर पर्याप्त ध्यान दिया गया होता, तो आज भारत के गांवों में खुशहाली होती, आत्मनिर्भरता और स्वावलंबन होता और राष्ट्रीय आय में बढ़ोतरी होना भी अवश्यम्भावी था।

बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के आगमन से तो स्थिति बदतर हुई है क्योंकि घरेलू स्तर पर बनाई जा सकने वाली वस्तुओं का निर्माण भी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों द्वारा किया जा रहा है। इससे कुटीर और लघु उद्योग इकाइयों को प्रतिस्पधापूर्ण स्थिति का सामना करना पड़ रहा है और अपूर्णनीय क्षति हुई है। गांधी जी का 'हरिजन' में प्रकाशित मत पूर्णतः सत्य सिद्ध हुआ है कि "औद्योगीकरण बड़े पैमाने पर किया गया, तो उससे ग्रामवासियों का प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष शोषण अवश्य ही होगा।"

गांधी जी सदा ही अंधानुकरण के खिलाफ थे। उनका मत था कि मशीनें मनुष्य को गुलाम बना देती हैं, बेकारी के लिए भारत जैसे बड़े आबादी वाले देश में यंत्रीकरण ही प्रमुख रूप से उत्तरदायी है। कुटीर उद्योगों का भारतीय अर्थ-व्यवस्था के लिए बुनियादी महत्व है। हालांकि देश में कुटीर उद्योग या घरेलू उद्योग किसी न किसी रूप में जीवित हैं तथा यही घरेलू उद्योग-धन्धे स्थानीय बाजारों की आवश्यकता की पूर्ति करते हैं। वर्तमान में, गांधी जी के विचारों को व्यावहारिक जीवन में अपनाये बगैर, हम अपनी अर्थ-व्यवस्था को पश्चिम के अंधानुकरण में दिन-प्रतिदिन जर्जर तथा खोखली करते जा रहे हैं। हमें अपने समाज, राष्ट्र तथा अर्थव्यवस्था को बचाने के लिए गांधी जी के शब्दों, "यदि ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था नष्ट होती है तो संपूर्ण भारत भी नष्ट हो जाएगा, ग्रामीण उद्योगों का विनाश भारत के सात लाख गांवों का विनाश कर देगा" -से सबक लेना होगा। हालांकि थोड़ा बदलाव पंचायती राज व्यवस्था के विकेन्द्रीकरण के बाद हुआ है। लेकिन वह अपर्याप्त है। इसके मद्देनजर गांधी जी के विचारों की प्रासंगिकता उतनी ही है जितनी पचास वर्ष पहले थी।

स्वतंत्रता की पचासवीं वर्षगांठ पर, अर्थ-व्यवस्था को गांधी जी के आदर्शों और सपनों के अनुरूप ढालने और कुटीर तथा लघु उद्योगों को जर्जर तथा रुग्ण अवस्था से उभारने के लिए सरकार को अपनी नीतियों का क्रियान्वयन इस प्रकार सुनिश्चित करना होगा कि देश की आर्थिक खुशहाली, स्वावलंबन और समृद्धि का गांधी जी का स्वप्न साकार हो सके। □

ग्रामीण महिलाएं और पोषण

डा. उम्मेद सिंह इन्दा

भारत को गांवों का देश कहा जाता है। भारतीय जनसंख्या का एक बड़ा भाग गांवों में रहता है। आजादी के पश्चात् गांवों के परिदृश्य में बहुत बड़ा बदलाव देखने को मिलता है। जब हमारी संविधान सभा भारत के लिए संविधान बनाने का कार्य कर रही थी, उस समय एक प्रश्न उठा था, जो बहुत दिशा-सूचक प्रश्न था कि संविधान में इकाई क्या हो या संविधान की इकाई किसे माना जाए? महात्मा गांधी की मान्यता थी कि गांव को संविधान में इकाई माना जाए और उन्होंने इस दिशा में संकेत भी दिया कि जो गांवों और ग्रामीण पंचायतों की नब्ज पहचान लेगा, वही राष्ट्रीय-पंचायत (संसद) तक पहुंच सकेगा। परन्तु संविधान निर्माता डा. भीमराव अम्बेडकर की मान्यता थी कि संविधान की इकाई 'गांव' कभी नहीं हो सकता। ले-देकर संविधान सभा में इस मुद्दे पर तय हुआ कि व्यक्ति को संविधान की इकाई माना जाए।

हमारे संविधान को लागू हुए 47 वर्ष हो गये हैं। विकासशील देशों में भारत को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। जनसंख्या की दृष्टि से भारत विश्व में दूसरे स्थान पर है। 1991 की जनगणना के अनुसार 40.71 करोड़ महिलाएं भारत में हैं। इनमें से 30.5 करोड़ महिलाएं गांवों में रहती हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि महिलाओं की कुल जनसंख्या का लगभग 75 प्रतिशत भाग गांवों में रहता है। इसमें कोई दो राय नहीं कि गांवों की स्थिति में बदलाव आया है। विकास और परिवर्तन की किरणों ने गांवों को भी आलोकित किया है परन्तु जब महिलाओं की वास्तविक या बुनियादी आवश्यकताओं की ओर देखते हैं तो पाते हैं कि अधिकतर ग्रामीण महिलाओं को पर्याप्त भोजन नहीं नसीब होता और होता भी है तो भोजन की 'गुणवत्ता' बहुत निम्न किस्म की होती है। परिणामस्वरूप गांवों में कुपोषण की समस्या निरन्तर बढ़ती जा रही है। प्रश्न उठता है कि जब भारत को गांवों का देश कहते हैं और प्रत्येक पंचवर्षीय योजना में ग्रामीण विकास पर बल दिया गया, गांवों के विकास हेतु समय-समय पर ट्राइसेम/जवाहर रोजगार योजना/डवाकरा/महिला समृद्धि योजना/महिला साक्षरता/राष्ट्रीय महिला कोष जैसी योजनाएं चलाई गईं तो गांवों में महिलाओं की दशा में सुधार क्यों नहीं हुआ।

भारत में महिलाओं की कार्य सहभागिता 27.20 प्रतिशत है और महिलाओं की साक्षरता 1991 की जनगणना के अनुसार 39.3 प्रतिशत है। भारतीय राजनीति में महिलाओं की भागीदारी 7.2 प्रतिशत है और पंचायतों में महिलाओं के लिए एक-तिहाई स्थान आरक्षित किए गए हैं। प्रशासनिक तथा अन्य सेवाओं में महिलाओं की हिस्सेदारी लगभग 11 प्रतिशत है। ट्राइसेम योजना में 40 प्रतिशत तथा जवाहर रोजगार योजना में 30 प्रतिशत स्थान महिलाओं के लिए आरक्षित हैं। अनेक योजनाएं तो मात्र ग्रामीण महिलाओं को समर्पित हैं। इसके बावजूद गांवों में महिलाओं की स्थिति दयनीय है। गांवों का यह 'कुपोषण' देश की अर्थ-व्यवस्था और जन-मानस दोनों को प्रभावित करता है। गांव अभी तक निरक्षरता के अन्धेरे से मुक्ति नहीं पा सके हैं। हालांकि इस दिशा में प्रयास जारी हैं। गांव में स्वास्थ्य संबंधी जानकारियां या तो पहुंचती नहीं और यदि पहुंचती भी हैं तो वे मात्र 'प्रतीकात्मक' होती हैं। अनेक परिवारों में देखा गया है कि ग्रामीण महिलाएं सबसे बाद में बचा-खुचा भोजन करती हैं। कई बार तो भूखे ही सो जाती हैं। सामान्य स्थिति की तो बात छोड़िए। गर्भवती महिलाओं की भी यही स्थिति होती है। इसका परिणाम होता है—कुपोषित जच्चा, कुपोषित बच्चा। गर्भ को जो अपेक्षित कैलोरी चाहिए वह मिल नहीं पातीं, जिससे उसका सही दिशा में विकास नहीं होता। मां में 'रक्तअल्पता' बढ़ती जाती है, जिससे प्रायः नवजात शिशु कमजोर पैदा होता है और उसे भी रक्त की जरूरत पड़ती है। कुछ अपवादों को छोड़कर यदि आकलन करें तो पाते हैं कि औसतन गर्भवती का वजन 40 किलो होता है। इतने कम वजन में शिशु को जन्म देना खतरे का संकेत है। यदि शिशु का जन्म सकुशल हो भी जाता है तो मां के दूध की अपौष्टिक स्थिति के कारण एक कुपोषित शिशु जिन्दगी भर कमजोरी या लाचारी की जिन्दगी जीने के लिए बाध्य होता है।

कुपोषण से अभिप्राय केवल अल्प मात्रा में भोजन नहीं, वरन् भोजन की मात्रा और भोजन की पौष्टिकता तथा प्रोटीनों से है। भोजन की कम मात्रा, कम पौष्टिकता और अल्प प्रोटीन या प्रोटीन नहीं होने के कारण शरीर निरन्तर कमजोर होता जाता है। दुर्भाग्य से गांवों में मनोरंजन के साधनों के अभाव में 'औरत' मनोरंजन का एक साधन है। नतीजा यह होता है कि बिना सोचे-समझे बच्चों की कतार लम्बी होती जाती है और इन बच्चों का पेट पालने के लिए

(शेष पृष्ठ 30 पर)

खो रहा है बचपन मजदूरी में

सत्यनारायण नाटे*

हमारे कल के कर्णधारों, कल के राष्ट्र निर्माताओं, कल की दुनिया और कल की सुनहरी उम्मीदों के प्रतीक बच्चों की मौजूदा और भविष्य की भयावह स्थिति की ओर जब हमारा ध्यान जाता है, तो हम पाते हैं कि करोड़ों बच्चे जिन परिस्थितियों में बड़े हो रहे हैं, उसका मतलब यह है कि वे अपनी जन्मजात मानसिक और शारीरिक क्षमता का विकास कभी नहीं कर पाएंगे। यह एक ऐसी मानवीय त्रासदी है, जिसके अपने अंदर ही खुद के नवीकरण के बीज मौजूद हैं। वे बच्चे शिक्षा का अधिकतम लाभ नहीं उठा पायेंगे और इसीलिए उनके पास उत्पादक कार्यों की क्षमता कम होगी।

गरीब परिवार में बच्चे तीन-चार साल की उम्र से ही घर के कामों में हाथ बंटाने लगते हैं। यदि मां बर्तन मांजने के लिए कुछ घरों में जाती है तो वह तीन-चार साल का बच्चा भी साथ जाता है और काम में मां का हाथ बंटाता है। यदि मां-बाप किसी खेत, दुकान या अन्य धंधे में होते हैं, तो बच्चा बेगार करके घर वालों की मदद करता है।

सात-आठ साल की उम्र तक आते-आते गरीब बच्चों को अपने जीवन-संघर्ष में जुट जाना पड़ता है। स्कूल जाने के स्थान पर वे किसी उस्ताद अथवा मिस्त्री से काम सीखने लगते हैं या घर में चले आ रहे पुश्तैनी कामों में सहयोग देने लगते हैं अथवा खेती, पशु चराने या दूसरे कामों में लग जाते हैं। बिहार के भूतपूर्व मुख्यमंत्री श्री लालू प्रसाद ने ग्रामीण बच्चों की सुविधा के लिए चरवाहा विद्यालय की स्थापना की थी, लेकिन योजना कारगर सिद्ध न होकर केवल कागजी बन कर रह गई। इसलिए इस वर्ग के बच्चे या तो पढ़ते ही नहीं या जल्द ही स्कूल छोड़ कर हाकर अथवा घरेलू नौकर बन जाते हैं। और नहीं तो, किसी गैर-कानूनी धंधे में लग जाते हैं। वे तस्करों के लिए काम करने वाले लड़कों में शामिल होकर माल लाने, ले जाने, पैकिंग करने, पैकेट पहुंचाने का काम करने लग जाते हैं। आज भी झोपड़-पट्टियों में अवैध शराब के धंधे में बच्चे ही बोतलें इधर-उधर करते हैं।

अधिक पैसे कमाने के लिए गांव के बच्चे शहर की ओर भागते हैं। शहरों में मध्यमवर्गीय परिवारों को सस्ते में घरेलू नौकर मिल जाते हैं। गांव के गरीब तबके के लोग अपने बच्चों को शहरों में मध्यमवर्गीय परिवारों को सौंप देते हैं।

गरीबी से जर्जर परिवार के लिए बच्चे आय का साधन बन जाते हैं। इसीलिए गरीबों को परिवार नियोजन की जरूरत ही महसूस नहीं होती। इनके लिए बच्चा आर्थिक आधार का अंग होता है। उदाहरण के तौर पर, मुसलमान परिवार के एक अनवर मियां को लिया जा सकता है। उनके परिवार में दस सदस्य हैं। मियां-बीबी, पांच लड़के और तीन लड़कियां हैं। बाप मैकनिक है– साइकिल, मोटर साइकिल, स्कूटर आदि की मरम्मत का काम करता है। लड़के बचपन से ही उसकी छोटी-सी दुकान में लगे रहते हैं और अपने बाप से काम सीखते तथा उसके काम में सहयोग करते हैं। लड़कियां बीड़ी बनाने तथा टाफियों पर रैपर लपेटने का काम करती हैं। परिवार के सभी सदस्यों के काम में जुटे रहने से अच्छी आमदनी हो जाती है। लेकिन उनके रहन-सहन में कोई सुधार नहीं हो पाता। बच्चों की पढ़ाई-लिखाई से उन्हें कोई सरोकार नहीं है क्योंकि अनवर मियां भी खुद पढ़े-लिखे नहीं हैं। जब ये चार-पांच वर्ष के ही थे, तभी से अपने बाप के साथ काम करने लगे थे। फिर मैकनिक बन गए। अनवर मियां से उनके परिवार का जायजा लेने के विचार से जब पूछ-ताछ की तो वे बोल पड़े, "हुजूर, पढ़-लिखकर क्या होगा? आप जानते ही हैं कि बेरोजगारी और मंहगाई किस कदर बढ़ी हुई है। बी. ए. और एम. ए. तो मारे-मारे फिर रहे हैं। मेरे एक रिश्तेदार ने अपने बेटे को पेट काट-काट कर बी. ए. तक पढ़ाया, लेकिन सब बेकार। आज वह तीन वर्षों से दफ्तरों के चक्कर लगा रहा है। पढ़ा-लिखा होने के कारण वह कोई छोटा-मोटा काम कर ही नहीं सकता और बड़ी तथा अच्छी नौकरी

बाल मजदूरी एक मानवीय समस्या है। गरीबी इतनी है कि लोग अपने बच्चों को पढ़ाते नहीं हैं और औलाद पैदा करना 'फ्यूचर इंवेस्टमेंट' मानते हैं। उनकी नजर में बच्चा परिवार की सहायता करता है। महानगरों तथा शहरों की सड़कों पर मोटर साफ करते, स्कूटर पोंछते, सामान उठाते, चाय की दुकानों, सस्ते होटलों अथवा ढाबों में 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चे ग्राहकों को पानी पिलाते, बर्तन मांजते, जूठा उठाते तथा चाय पिलाते नजर आते हैं। इसके पीछे एक ही मानसिकता है कि सस्ते में आसानी से बच्चे मजदूरी करने के लिए मिल जाते हैं। बच्चों के साथ मजबूरी है–गरीबी, भुखमरी और बेरोजगारी।

उसे मिल नहीं रही। ऐसी हालत में उसे भूखों मरना पड़ रहा है। उससे तो मेरे बच्चे लाख दर्जे अच्छे हैं। वे किसी के मोहताज नहीं हैं। वे अपनी रोटी खुद कमा रहे हैं। वे मेरे ऊपर बोझ नहीं हैं, बल्कि पैसों से मुझे मदद ही करते हैं। आखिर पढ़ाई-लिखाई तो रोजी-रोटी कमाने के लिए ही होती है न?'' परिवार नियोजन के संबंध में पूछने पर उन्होंने बताया-''परिवार नियोजन से क्या होता है? परिवार में अधिक बच्चे होने से आय भी तो अधिक होती है। परिवार में कम लोग रहेंगे तो भूखों मरना पड़ जाएगा।''

बाल मजदूरी एक मानवीय समस्या है। गरीबी इतनी है कि लोग अपने बच्चों को पढ़ाते नहीं हैं और औलाद पैदा करना 'फ्यूचर इंवेस्टमेंट' मानते हैं। उनकी नजर में बच्चा परिवार की सहायता करता है। महानगरों अथवा शहरों की सड़कों पर कार साफ करते, स्कूटर पोंछते, सामान उठाते, चाय की दकानों, सस्ते होटलों अथवा ढाबों में 14 वर्ष से कम उम्र के बच्चे ग्राहकों को पानी पिलाते, बर्तन मांजते, जूठा उठाते तथा चाय पिलाते नजर आते हैं। इसके पीछे एक ही मानसिकता है कि सस्ते में आसानी से बच्चे मजदूरी करने के लिए मिल जाते हैं। बच्चों के साथ मजबूरी है—गरीबी, भुखमरी और बेरोजगारी। इनके मां-बाप इतने गरीब होते हैं कि वे एक शाम खाते हैं तो दूसरी शाम की चिंता बनी रहती है। ऐसी स्थिति में वे उन्हें पढ़ाने तथा योग्य नागरिक बनाने के संबंध में सोच भी नहीं सकते।

अंतर्राष्ट्रीय श्रम संगठन ने अपील की थी कि मजदूरों की न्यूनतम आयु 15 साल होनी चाहिए। संगठन ने 1973 में यह मांग भी की थी कि बाल मजदूरी गैर-कानूनी घोषित हो। संभवतः विकसित देशों के लिए यह तर्क सही हो, पर विकासशील देशों में यह असंभव-सा है। इसलिए भारत सरकार ने यह आयु 14 साल रखी है।

भारत में बाल मजदूरों की संख्या लगभग एक करोड़ 70 लाख है। ये मजदूर खेतों में, खदानों में, कालीन उद्योग में, चमड़ा और साबुन निर्माण, चर्मशोधन, करघा उद्योग में, बीड़ी निर्माण में, शिवकाशी के माचिस तथा पटाखा उद्योग, कांच उद्योग, फिरोजाबाद के चूड़ी उद्योग, स्लेट तथा बर्तन उद्योग, ढाबा, ट्रांसपोर्ट और घरेलू नौकर के रूप में कार्यरत हैं। देश के 90 प्रतिशत से अधिक मजदूर बच्चे मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, बिहार, उड़ीसा, पश्चिम बंगाल, आंध्र प्रदेश, महाराष्ट्र, कर्नाटक, तमिलनाडु और गुजरात में कार्यरत हैं।

चौदह वर्ष से कम आयु के बच्चों से मजदूरों की भांति कार्य लेना एक सामाजिक अपराध है। यह आयु तो बच्चों के व्यक्तित्व निर्माण की आयु होती है। बिना पढ़े-लिखे ही कुछ रुपये के लिए बचपन के बहुमूल्य समय को रोजी-रोजगार में खपा देने से बच्चों की प्रगति का रास्ता रुक जाता है। उनमें आत्मविश्वास और आत्मसम्मान की भावना विकसित नहीं हो पाती। वे मजदूरी के मकड़जाल में फंस कर आगे बढ़ने की महत्वाकांक्षा खो देते हैं।

बाल मजदूरी की यह प्रथा किसी भी देश की अर्थ-व्यवस्था पर एक बोझ, मानवता के नाम पर कलंक और बच्चों के लिए अभिशाप है। विश्व के बच्चों की समस्याओं की ओर जनमत जुटाने तथा बाल कल्याण की योजनाओं के क्रियान्वयन में तेजी लाने के लिए प्रत्येक वर्ष अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बाल-दिवस मनाया जाता है। पहली बार बाल-दिवस 1953 के अक्तूबर माह में मनाया गया था। इसमें विश्व के एक दर्जन से अधिक देशों ने भाग लिया था। इसका आयोजन अंतर्राष्ट्रीय बाल कल्याण संघ ने किया था। अब अंतर्राष्ट्रीय बाल संघ और संयुक्त राष्ट्र बाल कोष इसका आयोजन करते हैं। आज प्रतिवर्ष 160 से अधिक देश इस दिवस को मनाते हैं। अंतर्राष्ट्रीय बाल-दिवस दिसम्बर में मनाया जाता है।

भारत में बाल-दिवस प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू के जन्म-दिवस 14 नंबम्बर को मनाया जाता है। बाल-दिवस का उद्देश्य बच्चों की आवश्यकताओं और अधिकारों के प्रति सरकार और जनता का ध्यान आकृष्ट करना है। इस दिन बच्चों की शिक्षा, समाज-कल्याण, स्वास्थ्य और पोषाहार-संबंधी आवश्यकताओं पर प्रकाश डाला जाता है।

संयुक्त राष्ट्र समझौते के अनुच्छेद-27 के अनुसार सभी राज्य यह स्वीकार करते हैं कि प्रत्येक बालक को ऐसा जीवन-स्तर बिताने का अधिकार है, जो बालक के शारीरिक, आध्यात्मिक, नैतिक और सामाजिक विकास के लिए पर्याप्त हो।

भारतीय संविधान में बाल मजदूरों के संबंध में स्पष्ट रूप से बताया गया है—अनुच्छेद 24 (भाग-3) के अनुसार चौदह साल से छोटा बच्चा किसी भी कारखाने, खान और खतरनाक काम में नौकरी नहीं कर सकता। लेकिन देश की आर्थिक जरूरतें इन नियमों को हमेशा भंग करती रही हैं।

हमारे देश में कई ऐसे अधिनियम मौजूद हैं, जिनके तहत चौदह वर्ष और किन्हीं विशिष्ट व्यवसायों में 15 वर्ष के कम उम्र के बच्चों से बतौर मजदूरी, काम लेना वर्जित है। ये अधिनियम संगठित क्षेत्र में काम करने वाले बच्चों पर ही लागू होते हैं, जबकि सच्चाई यह है कि संगठित क्षेत्र में बाल मजदूरों की संख्या सिर्फ दस प्रतिशत है और शेष 90 प्रतिशत बाल मजदूर गैर-संगठित क्षेत्र में काम करते हैं तथा इसी क्षेत्र में उनका अधिक शोषण होता है।

बाल कल्याण के लिए बनाए गए कुछ अन्य कानून इस प्रकार हैं—1933 में बाल अधिनियम, 1938 में बाल रोजगार अधिनियम,

1940 में भारतीय फैक्ट्री अधिनियम, 1947 में औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1951 में बागान श्रम अधिनियम, 1952 में खान अधिनियम, 1961 में मोटर यातायात अधिनियम। ये अधिनियम काम के घंटों को प्रतिबंधित करते हैं, विश्राम की अवधि निर्धारित करते हैं, न्यूनतम मजदूरी तय करते हैं, न्यूनतम आयु निर्धारित करते हैं और शोषण से संरक्षण की व्यवस्था करते हैं।

सन् 1986 में बाल मजदूरी को समाप्त करने के लिए 'चाइल्ड लेबर प्रोहिबिशन एंड रेगुलेशन' बिल को संसद द्वारा मंजूरी दे दी गई थी। इस विधेयक में अगले दस वर्षों में बाल मजदूरी को समाप्त करने का लक्ष्य रखा गया था, लेकिन आज दस वर्ष से अधिक समय हो जाने पर भी बाल मजदूरी ज्यों की त्यों बनी हुई है। सरकार तथा अन्य समाज-सेवी संस्थाएं चाह कर भी बाल मजदूरी को समाप्त नहीं कर सकीं।

हमारे देश में कई ऐसे अधिनियम मौजूद हैं, जिनके तहत चौदह वर्ष और किन्हीं विशिष्ट व्यवसायों में 15 वर्ष के कम उम्र के बच्चों के बतौर मजदूरी काम लेना वर्जित है। ये अधिनियम संगठित क्षेत्र में काम करने वाले बच्चों पर ही लागू होते हैं, जबकि सच्चाई यह है कि संगठित क्षेत्र में बाल मजदूरों की संख्या सिर्फ दस प्रतिशत है और शेष 90 प्रतिशत बाल मजदूर गैर-संगठित क्षेत्र में काम करते हैं तथा इसी क्षेत्र में उनका अधिक शोषण होता है।

सच पूछा जाए तो अपने देश से बाल मजदूरी को कभी भी, किसी भी हालत में कानून के जरिये रोका अथवा समाप्त नहीं किया जा सकता। भारत की भयानक गरीबी और वर्तमान स्थिति को मद्देनजर रखते हुए यह आवश्यक है कि बाल मजदूरों से संबंधित कुछ कानून बनाकर उन पर कड़ाई से अमल किया जाए। शिक्षा मात्र किताबी न होकर धंधों पर आधारित हो, ताकि बच्चा पढ़ाई के साथ-साथ पेट भी भर सके। इस बात का हमेशा ध्यान रखा जाए कि गरीब मां-बाप अपने बच्चों का स्कूल न छुड़ाएं। साथ ही उन्हें यह विश्वास भी दिलाया जाए कि उन्हें बच्चों को भोजन, किताबों और स्थानीय धंधे संबंधी तकनीकी शिक्षा की सुविधा मिलेगी।

फिलहाल निम्न वर्ग के बच्चों की पढ़ाई के लिए विशेष समय वाले स्कूल खोले जाएं, जिससे बच्चों का काम और शिक्षा दोनों साथ-साथ चल सकें। व्यावहारिक दृष्टि से बाल मजदूरों की समस्याओं को देखना होगा। यदि घरेलू परम्पराओं—कढ़ाई, कशीदाकारी आदि में लगे बच्चों को काम करने से रोका जाएगा तो वे आगे चलकर अपनी पारिवारिक कला को आगे नहीं बढ़ा सकेंगे। कुछ बाल विकास संस्थाओं के अधिकारियों का विचार है कि भारत से बाल मजदूरी को जड़ से खत्म नहीं किया जा सकता। कुछ ऐसे समाज-सेवी भी हैं, जो एक तरफ बाल मज़दूरों के कल्याण की बातें करते हैं, वे ही अपने घर में दस-बारह वर्ष के बच्चों को घरेलू नौकर के रूप में रख कर उनका जम कर शोषण करते हैं।

अतः बाल मजदूरों की समस्याओं का समाधान केवल कानूनों तथा घोषणाओं से नहीं हो सकता। हमें उन समस्याओं की जड़ में जाना होगा। यह सभी जानते हैं कि इसका प्रमुख कारण है—गरीबी और अशिक्षा। बच्चों को कम उम्र में मजदूर नहीं बनना चाहिए। लेकिन गरीबों की मजबूरी को भी नजर-अंदाज नहीं किया जा सकता। इसलिए व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाए तो बाल मजदूरी को पूरी तरह समाप्त नहीं किया जा सकता। किन्तु बाल मजदूरों की कार्य-दशाओं तथा सामाजिक वातावरण को अवश्य सुधारा जा सकता है। यदि पढ़ाई के साथ-साथ गरीब बच्चों को कुछ कमाई भी हो जाए तो बच्चों के मां-बाप उन्हें मजदूरी पर भेजने के लिए विवश नहीं होंगे। बच्चों को स्कूल में रोजगारोन्मुख शिक्षा देने की व्ययवस्था की जानी चाहिए, तभी बाल मजदूरों की समस्या का समाधान हो सकेगा। □

(पृष्ठ 27 का शेष) ग्रामीण महिलाएं और पोषण....

औरतों को और अधिक मेहनत-मजदूरी करनी पड़ती है। देखने में आया है कि गरीब परिवारों में बच्चे शीघ्र होते हैं और बच्चों की शादियां शीघ्र कर दी जाती हैं। फलतः परिवारों का चक्रवृद्धि विस्तार होता है। आयोडीन रहित, प्रोटीन रहित मां ऐसे बच्चों को जन्म देती है, जिन्हें समाज के विकृत चेहरे कहा जा सकता है। ग्रामीण महिलाएं अपना पूर्ण समय बच्चे के लालन-पालन में नहीं दे सकतीं। वे खेती-बाड़ी के कार्यों में भी पुरुषों का हाथ बंटाती हैं, कम पौष्टिक भोजन लेकर शहरी महिलाओं की अपेक्षा अधिक-श्रम-साध्य कार्य करती हैं।

मंहगाई निरन्तर बढ़ रही है। अधिक जनसंख्या की समस्या से गांव भी ग्रसित हैं। ऐसी स्थिति में आवश्यकता इस बात की है कि ग्राम पंचायतों के माध्यम से स्थानीय भाषा में स्वास्थ्य जागरूकता जगाई जाए। साक्षरता के प्रयास और अधिक तेज किए जाएं। परिवार नियोजन कार्यक्रम की जानकारी सर्वसुलभ गांव-गांव, ढाणी-ढाणी पहुंचायी जाए। समय-समय पर फैलने वाली अफवाहों का तार्किक ढंग से खंडन किया जाए। जब हमारे गांव स्वस्थ होंगे, तब राष्ट्र स्वस्थ होगा। □

भारतीय गांवों के प्राचीन गौरव को पुनः बहाल करने के लिए खादी ग्रामोद्योग राष्ट्रपिता द्वारा अपनाए गए प्रमुख माध्यम रहे हैं। स्वतंत्रता की स्वर्ण जयंती वर्ष में स्वदेशी की भावना को पुनः जागृत करने के लिए इस बात की नितांत आवश्यकता है कि बेरोजगारी की विकराल समस्या से छुटकारा पाने का कौन-सा ऐसा सरल साधन ढूंढा जाए जिसकी सहायता से स्वरोजगार इकाई स्थापित करना संभव हो। इस प्रश्न का उत्तर अपने में समेटे हुए खादी ग्रामोद्योग आयोग निरंतर ग्रामीण औद्योगीकरण की दिशा में अग्रसर है। यह आयोग विकास में कार्यरत एक विधि-सम्मत स्थापित संगठन है। इसकी स्थापना संसद के एक अधिनियम के तहत हुई। यह एक स्वायत्तशासी संगठन है जिसने अप्रैल 1957 में अखिल भारतीय खादी और ग्रामोद्योग मंडल से कार्यभार हाथ में लिया।

आयोग के कार्यों में कच्चे माल या अर्द्ध-प्रशोधित माल के प्रश के लिए सामूहिक सेवा सुविधाएं सृजित करना और खादी ग्राम के उत्पादों के विपणन का प्रावधान करना भी शामिल है। ग्रामोद्योग के उत्पादों अथवा हस्तशिल्प उत्पादों की बिक्री बढ़ा लिए आयोग जहां कहीं आवश्यक हो, सुसंगठित विपणन अभि के साथ संपर्क स्थापित करता है। इसी क्षेत्र में काम में लाई ज उत्पादन तकनीकों में अनुसंधान को प्रोत्साहित करने गैर-परम्परागत ऊर्जा और विद्युत शक्ति के उपयोग सहित सम्बन्धित समस्याओं के अध्ययन के लिए सुविधाएं सुलभ का दायित्व भी आयोग पर है, ताकि उत्पादकता बढ़े, कष्टदायक कम हो और इनकी प्रतिस्पर्धात्मक क्षमता बढ़े तथा इस अनुसंधान से प्राप्त विशेष परिणामों को दूर-दूर तक पहुंचा

ग्रामीण औद्योगीकरण में खादी ग्रामोद्योग योजनाओं का महत्व

नरेश कुमार कादयान

उद्देश्य

खादी ग्रामोद्योग बेकार जा रहे कच्चे माल को उपलब्धता के स्थान पर ही उपयोग करने का मार्ग प्रशस्त करता है। आयोग के मुख्य उद्देश्य इस प्रकार हैं :

- ग्राम स्तर पर अकुशल और अर्द्धकुशल लोगों को रोजगार देना,
- उपभोक्ताओं को उत्कृष्ट गुणवत्ता वाले उत्पाद प्रदान करना,
- ग्राम स्तर पर उद्योगों को चलाने हेतु उद्यमियों को प्रोत्साहन देकर जनता में आत्मनिर्भरता और ग्राम स्वराज की भावना को बढ़ावा देना।

कार्य

आयोग ग्रामीण क्षेत्रों में खादी ग्रामोद्योग परियोजनाओं को तैयार करता है और आवश्यकतानुसार ग्रामीण विकास में लगे अन्य अभिकरणों के साथ समन्वय स्थापित करता है। इन्हीं गतिविधियों के अंतर्गत कारीगरों को प्रशिक्षण दिलवाने और उनमें सहकारिता की भावना पैदा करने के अतिरिक्त कच्चे माल और औजारों को संग्रह करना भी शामिल है ताकि उत्पादकों को उनकी आपूर्ति की जा सके। व्यवस्था हो।

संगठनात्मक आधार

विकास की गति तेज करने के लिए आयोग ने 30 राज्य 4,777 पंजीकृत संस्थाओं और 30,100 औद्योगिक स समितियों के साथ एक संगठनात्मक आधार तैयार किया है। अलावा देश भर में 15,180 बिक्री केंद्र हैं। राष्ट्र में यह एक संगठन है जिसकी जड़ें गांवों में हैं और जिसका व्यापक संगठ ढांचा है। लगभग 32 प्रतिशत लाभार्थी अनुसूचित जातियं जनजातियों के हैं। इसकी गतिविधियों में महिलाओं की भा भी काफी अधिक अर्थात 46 प्रतिशत है।

आयोग के तहत उद्योग

खादी ग्रामोद्योग की कार्य परिधि में आने वाली योजना सात मुख्य भागों में वर्गीकृत किया गया है जो इस प्रकार

समूह-1 : खनिज आधारित उद्योग : (1) ग्रामीण कुम्हारी (2) चूना पत्थर, चूना सीपी और अन्य चूना उत्पाद उद्योग, (3) और भवनों के लिए पत्थर की कटाई, पिसाई, नक्काशी तथा

(4) पत्थर से बनी हुई उपयोगी वस्तुएं, (5) स्लेट और स्लेट पैंसिल का निर्माण, (6) प्लास्टर आफ पैरिस का निर्माण, (7) बर्तन धोने का पाउडर, (8) सोने, चांदी, पत्थर, सीपी और कृत्रिम सामग्रियों से आभूषणों का निर्माण, (9) गुलाल, रंगोली का निर्माण, (10) चूड़ी निर्माण, (11) पेंट, रंजक, वार्निश और डिस्टेंपर निर्माण, (12) कांच के खिलौनों का निर्माण, (13) सजावटी शीशे की कटाई, डिजाइनिंग, पालिशिंग, (14) रत्न कटाई।

समूह-2 : वनाधारित उद्योग : (15) हाथ कागज, (16) कत्था निर्माण, (17) गोंद और रेसिन निर्माण, (18) लाख निर्माण, (19) कुटीर दियासलाई उद्योग, पटाखे और अगरबत्ती निर्माण, (20) बांस और बेंत कार्य, (21) कागज से प्याले, तश्तरी, झोले और कागज के डिब्बों का निर्माण, (22) कापियों की जिल्दसाजी, लिफाफा निर्माण, रजिस्टर निर्माण और कागज से बनाई जाने वाली अन्य लेखन-सामग्रियां, (23) खस टट्टी और झाड़ू निर्माण, (24) वनोत्पादों का संग्रह, प्रशोधन और पैकिंग, (25) फोटो जड़ना।

समूह-3 : कृषि आधारित और खाद्य उद्योग : (26) अनाज, दाल, मसाले, चटपटे मसाले आदि का प्रशोधन, पैकिंग और विपणन, (27) नूडल निर्माण, (28) विद्युत चालित आटा चक्की, (29) दलिया निर्माण, (30) लघु चावल छटाई इकाई, (31) ताड़-गुड़ निर्माण और अन्य ताड़ उत्पाद उद्योग, (32) गन्ना गुड़ और खांडसारी निर्माण, (33) भारतीय मिष्ठान निर्माण, (34) रसवंती-गन्ना रस खान पान इकाई, (35) मधुमक्खी पालन, (36) आचार सहित फल और सब्जी का प्रशोधन, परीक्षण एवं डिब्बाबंदी, (37) घानी तेल उद्योग, (38) मेन्थाल तेल, (39) रेशा (नारियल जटा को छोड़कर), (40) औषधीय कार्यों के लिए जड़ी-बूटियों का संग्रह, (41) मक्का और रागी का प्रशोधन, (42) सज्जा-कार्य, सज्जा चटाइयों और हारों आदि का निर्माण, (43) काजू प्रशोधन, (44) पत्ते का दोना बनाना, (45) दुग्ध उत्पादन निर्माण इकाई, (46) पशु चारा, मुर्गी चारा निर्माण।

समूह-4 : बहुलक और रसायन आधारित उद्योग : (47) शवच्छेदन, चर्मशोधन तथा खाल व त्वचा से संबंधित अन्य सहायक उद्योग एवं कुटीर चर्म उद्योग, (48) कुटीर साबुन उद्योग, (49) रबड़ की वस्तुओं का निर्माण (डिप्ड लेटेक्स उत्पाद), (50) रेग्जीन, पी.वी.सी. से बने उत्पाद, (51) हाथी दांत समेत सींग और हड्डी उत्पाद, (52) मोमबत्ती, कपूर और मोहरवाली मोम का निर्माण, (53) प्लास्टिक की पैकेजिंग वस्तुओं का निर्माण, (54) बिंदी निर्माण, (55) मेहंदी का निर्माण, (56) इत्र निर्माण, (57) शैंपू निर्माण, (58) केश तेल निर्माण, (59) डिटर्जेंट और धुलाई पाउडर निर्माण (अविषाक्त)।

समूह-5 : इंजीनियरिंग और गैर-परम्परागत ऊर्जा : (60) बढ़ईगिरी, (61) लुहारगिरी, (62) एल्युमनियम के घरेलू बर्तनों का उत्पादन, (63) गोबर और अन्य अपशिष्ट उत्पाद, (64) कागज पिन, क्लिप, सेफ्टी पिन, स्टोव पिन आदि का निर्माण, (65) सजावटी बल्बों, बोतलों, ग्लासों आदि का निर्माण, (66) छाता उत्पादन, (67) सौर तथा पवन ऊर्जा उपकरण, (68) हस्त निर्मित पीतल के बर्तनों का निर्माण, (69) हस्त निर्मित तांबे के बर्तनों का निर्माण, (70) हस्त निर्मित कांसे के बर्तनों का निर्माण, (71) पीतल, तांबे और कांसे से अन्य वस्तुओं का निर्माण, (72) रेडियो निर्माण, (73) कैसेट प्लेयर का निर्माण, भले ही वह रेडियो में लगा हुआ हो या न लगा हो, (74) कैसेट रिकार्डर का निर्माण, भले ही वह रेडियो में लगा हुआ हो या न लगा हो, (75) वोल्टेज स्टेब्लाइजर का उत्पादन, (76) इलेक्ट्रानिक और अलार्म घड़ियों का निर्माण, (77) लकड़ी की नक्काशी और कलात्मक फर्नीचर निर्माण, (78) टीन कार्य, (79) मोटर वाइंडिंग, (80) तार की जाली बनाना, (81) लोहे की झंझरी (ग्रिल) निर्माण, (82) ग्रामीण यातायात वाहन जैसे हाथगाड़ी, बैलगाड़ी, छोटी नाव, दुपहिया साइकिल/साइकिल रिक्शा, मोटर युक्त गाड़ियों आदि का निर्माण, (83) संगीत साजों का निर्माण।

समूह-6 : वस्त्रोद्योग (खादी को छोड़कर) : (84) पोलीवस्त्र यानी ऐसा वस्त्र जो भारत में मानव निर्मित रेशे को रूई, रेशम या ऊन के साथ या इनमें से किसी दो या सभी को मिलाकर हाथ से काता गया तथा हाथक पर बुना हो या भारत में बना ऐसा वस्त्र जो हाथकते मानव-निर्मित रेशों के धागे को सूती, रेशमी या ऊनी धागे या इनमें से किसी दो धागे या सभी धागों को मिलाकर हथकरघे पर बुना गया हो, (85) लोकवस्त्र का निर्माण, (86) हाज़री, (87) होज़री, सिलाई और सिली-सिलाई पोशाक तैयार करना, (88) छींटकारी, (89) खिलौना और गुड़िया निर्माण, (90) धागे का गोला, ऊनी गोला तथा लच्छी निर्माण, (91) कशीदाकारी, (92) शल्य-चिकित्सीय पट्टी निर्माण, (93) स्टोव की बत्तियां।

समूह-7 : सेवा उद्योग : (94) धुलाई, (95) नाई, (96) बिजली की वाइरिंग और घरेलू इलेक्ट्रोनिक उपकरणों की मरम्मत, (98) डीजल इंजनों, पंप सेटों आदि की मरम्मत, (99) टायर वल्कनीकरण (रिट्रीडिंग) इकाई, (100) छिड़काव, कीटनाशक, पंप सेटों आदि के लिए कृषि सेवा कार्य, (101) लाउड स्पीकर, ध्वनि प्रसारण, माइक आदि ध्वनि प्रणालियों को किराये पर देना, (102) बैटरी चार्जिंग, (103) कला फलक चित्रकारी, (104) साइकिल मरम्मत की दुकानें, (105) राजगीरि (106) बैंड मंडली, (107) मोटर युक्त स्थानीय नाव, (केवल गोवा के लिए) (108) टैक्सी के रूप में चलने वाली मोटर साइकिल (केवल गोवा के लिए) और (109) संगीत वाद्य (केवल गोवा के लिये)।

उद्योगों की स्थापना के लिए वित्तीय सहायता

(क) कोई उद्यमी व्यक्तिगत आधार पर 10 लाख रुपये तक की

(शेष पृष्ठ 44 पर)

कुरुक्षेत्र 40 वर्ष पहले

मलयालम लोक-कथा

पत्ता, ढेला, हवा और पानी*

द्रोणवीर कोहली

बात आज की नहीं, आज से सौ साल पहले की भी नहीं। न जाने कितने हजार बरस बीत गए होंगे। किसी जंगल में एक पेड़ था। एक दिन उस पेड़ का एक पत्ता टूट कर गिर पड़ा और सूखने लगा।

नीचे कहीं मिट्टी का एक ढेला पड़ा था। वह किसी मिट्टी ढोने वाले गधे से नीचे गिरा था। अपने भाइयों से अलग होकर वह बड़ा दुखी था। साथ ही उसे क्रोध भी बहुत आता था, क्योंकि गिरते समय उसे बचाने की किसी ने भी कोशिश नहीं की थी।

पर, खैर। पत्ते को देखकर वह सोचने लगा—'चलूं इसी से मित्रता कर लूं। मुसीबत में काम आएगा।'

इतना सोच कर वह पत्ते से बोला—"चलो भाई, हम-तुम मित्रता कर लें। हम मिल-जुल कर रहेंगे। इकट्ठे पकाएंगे, इकट्ठे खाएंगे। कोई शत्रु आया, तो उसे मार भगाएंगे। आज से मैंने तेरा हाथ पकड़ा, तू भी मेरा हाथ पकड़।"

पत्ता बड़ा बुद्धिमान था। झट मान गया। अपने दिल में सोचने लगा—'एकता में बड़ी शक्ति है। एक-एक मिल कर ग्यारह होते हैं। हम मिलकर सुख से रहेंगे।' फिर उसने ढेले से कहा—"अच्छा भई, तू मेरा दोस्त, मैं तेरा दोस्त।"

तो दोनों में मित्रता हो गई और यह मित्रता दिन-दिन गहरी भी होती गई।

एक दिन दोनों यात्रा को निकले। रास्ते में बादल घिर आए। बिजली कौंधने लगी। फिर मूसलाधार वर्षा होने लगी। तब पत्ता ढेले के ऊपर बैठ गया। पानी बरसता रहा और बरसता रहा, और इतना बरसा कि नदियां किनारे तोड़ कर बहने लगीं, पेड़ टूट कर गिर पड़े, फसलें नष्ट हो गईं। गांव नष्ट हो गए, किसान बेघर हो गए। पर पत्ते और ढेले का बाल भी बांका नहीं हुआ, क्योंकि दोनों में एका था और एका करने वाले हर विपत्ति का डटकर मुकाबला कर सकते हैं।

जब पानी थम गया, तो दोनों दोस्त फिर चल पड़े। दोनों खुश थे। पर थोड़ी ही दूर चले थे कि बड़ी तेज हवा बहने लगी। तब ढेला झटपट पत्ते के ऊपर बैठ गया। हवा चलती रही, और इतनी तेज चली कि नदियों का पानी उड़ने लगा। पेड़ जड़ से उखड़ गए। फसलें नष्ट हो गईं। गांव की झोंपड़ियां उड़ गईं। किसान बेघर हो गए।

पर पत्ते और ढेले का बाल भी बांका नहीं हुआ, क्योंकि दोनों में एका था। और एका हो, तो लाख तूफान आएं, पानी बरसे, पर उनका कोई कुछ बिगाड़ नहीं सकता। एके में यही तो शक्ति है।

परन्तु हवा और पानी से यह सब न देखा गया। उनमें सांठ-गांठ हुई, और उन्होंने निश्चय किया कि पत्ते और ढेले का एका तोड़ कर ही दम लेंगे।

बस दोनों ने पत्ते और ढेले में फूट डालनी शुरू की। पहले वे पत्ते के पास गए। पर पत्ते ने दोनों को वह डांट पिलाई, वह डांट पिलाई कि हवा की तो हवा सरक गई, और पानी लाज से पानी-पानी हो गया।

फिर वे ढेले के पास गए। असल में बता दूं कि ढेला पूरा मिट्टी का माधव था। वह हवा और पानी की बातों में आ गया। हवा और पानी ने ढेले को आश्वासन दिया कि "पत्ते का पत्ता काटकर, हम तुम्हें बड़ा सुखी रखेंगे।" फिर हवा ने कहा—"मैं तुम्हें अपने झूले में सुलाऊंगी, फिर मीठी लोरी गाकर सुनाऊंगी।" पानी ने कहा—"मैं तुम्हें गरमियों में सदा शीतल रखूंगा। तू हरा-भरा हो जाएगा।"

बस ज्यादा क्या कहूं, सौ बात की एक बात कि हवा और पानी ने पत्ते और ढेले में फूट डलवा दी; और पत्ता और ढेला अलग-अलग हो गए। दोनों में एकता का अन्त हो गया।

तब हवा और पानी ने अपना असली रंग दिखाया। सबसे पहले हवा जोर-जोर से बहने लगी। बेचारा पत्ता आकाश में उड़ने लगा और उड़कर एक नदी में जा गिरा। नदी समुद्र में गिरती थी, सो पत्ता भी समुद्र में जा गिरा। अगर दोनों में एका होता और ढेला पत्ते पर बैठ जाता तो बेचारे पत्ते की यह दशा न होती।

अब ढेले की बारी थी। ढेले की खबर पानी ने ली। पानी पूरे वेग से गिरा। मानो आकाश ही फट पड़ा। बेचारे ढेले की क्या बिसात थी? वह गल कर वहीं बह गया।

यह सब क्यों हुआ? क्योंकि पत्ते और ढेले की एकता जाती रही। एकता न होने से दोनों की शक्ति क्षीण हो गई और शत्रुओं ने उन पर हमला करके उनकी सत्ता ही मिटा दी। एकता के अभाव में ऐसा ही होता है। □

*कुरुक्षेत्र, जनवरी 1958 अंक से उद्धृत

योजना

योजना में हर महीने
शिक्षा, स्वास्थ्य, कृषि, कराधान
जैसे विकास के उन सभी पहलुओं पर
विशेषज्ञों द्वारा चर्चा की जाती है जो
आम आदमी के जीवन पर असर डालते
हैं।

यदि आप किसी प्रतियोगी परीक्षा
की तैयारी में जुटे हैं तो योजना में आपको
प्रामाणिक जानकारी मिल सकती है।

योजना पढ़ना हर दृष्टि से फायदेमंद है

यह पत्रिका हिन्दी, अंग्रेजी, उर्दू, पंजाबी,
बंगला, गुजराती, मराठी, तमिल, तेलुगू,
कन्नड़, मलयालम, उड़िया और असमिया
में प्रकाशित होती है।

शुल्क दरें

एक वर्ष : 50 रुपये दो वर्ष : 95 रुपये,
तीन वर्ष : 135 रुपये

डिमांड ड्राफ्ट/पोस्टल आर्डर/मनी आर्डर
निम्न पते पर भेजें :

व्यापार व्यवस्थापक
प्रकाशन विभाग
पटियाला हाऊस
नई दिल्ली-110001

प्रकाशन विभाग ● विक्रय केंद

पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001; सुपर बाजार, (दूसरी मंजिल), कनाट सर्कस, नई दिल्ली-110001; कामर्स हाउस, करीम भाई रोड, वालार्ड पायर, मुंबई-400038; 8, एस्प्लेनेड ईस्ट, कलकत्ता-700069; राजाजी भवन, बेसेंट नगर, चेन्नई-600090; बिहार राज्य सहकारी बैंक बिल्डिंग, अशोक राजपथ, पटना-800004; निकट गवर्नमेंट प्रेस, प्रेस रोड, तिरुअनंतपुरम-695001; 27/6, राममोहन राय मार्ग, लखनऊ-226019; राज्य पुरातत्वीय संग्रहालय बिल्डिंग, पब्लिक गार्डन्स, हैदराबाद-500004; प्रथम तल, "एफ" विंग, केंद्रीय सदन, कोरा मंडल, बंगलौर-560034

पत्र सूचना कार्यालय

सी.जी.ओ. काम्पलैक्स, 'ए' विंग, ए.बी. रोड, इंदौर (म.प्र.); 80, मालवीय नगर, भोपाल-462003; के-21, नंद निकेतन, मालवीय नगर, 'सी' स्कीम, जयपुर-302003

पर्यावरण और आर्थिक विकास

डा. राजनाथ

आर्थिक विकास तथा पर्यावरण का आपस में बहुत गहरा संबंध है। यह संबंध आपसी विरोधी भाव को प्रदर्शित करता है, क्योंकि विश्व में यह देखने को मिलता है कि जिस देश ने आज जितना आर्थिक-औद्योगिक विकास किया है उतना ही अधिक वहां पर्यावरण प्रदूषित हुआ है। तेजी से हो रहे औद्योगिक विकास ने ही आज संपूर्ण पर्यावरण को इस हद तक प्रदूषित कर दिया है कि मानव-समाज ही नहीं बल्कि संपूर्ण प्राणि-जगत ही विनाश के कगार पर आ पहुंचा है। पर्यावरण प्रदूषण के कारण ही ओजोन परत में छिद्र, वातावरण में जहरीली गैसें, उपजाऊ भूमि का रेगिस्तान होना, बहुमूल्य वन सम्पदा का विनाश, मानव स्वास्थ्य में गिरावट इत्यादि बातें बहुत तेजी से बढ़ रही हैं जो आने वाले दिनों में अपना भयावह प्रभाव दिखायेंगी। विकास की प्रक्रिया में नित नयी-नयी खोज के लिए आतुर मानव ने जहां एक ओर अनोखी उपलब्धियां हासिल की हैं, वहीं दूसरी ओर उसके कृत्यों से पर्यावरण में गंभीर असंतुलन उत्पन्न हो गया है। पर्यावरण असंतुलन के परिणामस्वरूप ही हरी-भरी धरती रेगिस्तान हो रही है। प्रदूषण, भूमि और वनस्पति के अंधा-धुंध दोहन का एक कटु सत्य है जिसकी ओर से हम सबने आंखें बंद कर रखी हैं।

प्रदूषण का साधारण अर्थ वातावरण का दूषित होना अर्थात प्रकृति की आनुपातिक संरचना में परिवर्तन होना है और इसने संपूर्ण जीव-जगत को प्रभावित किया है। प्रदूषण की समस्या एक भौतिक समस्या है, जो परोक्ष या अपरोक्ष रूप से सभी प्राणियों को प्रभावित करती है। स्वच्छ पर्यावरण प्रकृति का अनुशासित तथा संतुलित रूप है। इसी अनुशासन के भंग होने या संतुलन बिगड़ने से प्रदूषण उत्पन्न होता है।

मानव की सभी गतिविधियों में पर्यावरण एक ऐसी गतिविधि है जिसे सबसे अधिक गंभीर खतरा औद्योगीकरण से होता है। औद्योगीकरण में विभिन्न स्रोतों से एकत्र की गयी कच्ची सामग्रियों और ऊर्जा को, एक स्थान पर लाकर उन्हें उत्पादों में परिवर्तित किया जाता है। इस प्रक्रिया से निश्चय ही काफी मात्रा में अपशिष्ट पदार्थ निकलते हैं। ये अपशिष्ट ठोस, द्रव तथा गैस के रूप में निकलते हैं। उद्योगों में होने वाले अपशिष्ट पदार्थ लोगों के स्वास्थ्य के लिए खतरा पैदा करते हैं।

पर्यावरण समस्या विकसित देशों में ही नहीं अपितु विकासशील तथा अविकसित देशों में भी व्याप्त है। वैज्ञानिकों ने इस तथ्य को स्पष्ट कर दिया है कि प्रदूषण किसी भी तरह का हो, मनुष्य के लिए हानिकारक है। पर्यावरण प्रदूषण की कीमत पर होने वाला विकास जिस डाल पर बैठे हैं, उसी को काटने वाले कालिदास जैसी हालत में ले जायेगा। प्रायः औद्योगिक देशों में प्रदूषण की समस्या औद्योगिक क्षेत्रों (शहरों) तक ही सीमित है, जबकि भारत में यह समस्या गांवों में भी मौजूद है। भारत में जल और वायु प्रदूषण की समस्या दिन-प्रतिदिन विकराल रूप धारण का जा रही है। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद औद्योगीकरण, शहरीकरण, तकनीकी विकास तथा विविधिकरण ने जल-प्रदूषण की समस्या को अत्यधिक गंभीर बना दिया है।

तीव्र औद्योगीकरण ने विश्व के प्रायः सभी स्थानों पर पर्यावरण की समस्या उत्पन्न कर दी है। इसके माध्यम से विश्व की 37 प्रतिशत ऊर्जा की खपत होती है और 50 प्रतिशत कार्बन-डाई-आक्साइड, 90 प्रतिशत सल्फर-डाई-आक्साइड एवं विविध प्रकार के विषैले रसायनों का उत्सर्जन होता है जिससे ओजोन की परत को गंभीर खतरा उत्पन्न हो गया है। उद्योग ने जल संसाधन का भी दुरुपयोग किया है—जिसका दुष्परिणाम सर्वज्ञ देखा जा सकता है। आज विकास का एकमात्र मापदंड माना जाने वाला औद्योगिक विकास प्रदूषण का प्रमुख स्रोत बन गया है। मोटे तौर पर हम यह कह सकते हैं कि यदि वर्तमान विकास प्रणाली से प्राकृतिक संसाधनों के विनाश की यह प्रक्रिया लगातार जारी रही तो आने वाले समय में केवल विश्व अर्थ-व्यवस्था का आधार ही नष्ट-भ्रष्ट नहीं होगा बल्कि मानव-मात्र का अस्तित्व ही खतरे में पड़ जाएगा।

पर्यावरण असंतुलन से सारी धरती प्रभावित हो रही है। वायुमंडल दूषित हो गया है। ओजोन की रक्षा-पट्टी कमजोर होने से तापमान बढ़ रहा है। मौसम का क्रम बिगड़ रहा है, पानी के परंपरागत स्रोत सूखने लगे हैं, भूमि की उर्वरा शक्ति तेजी से क्षीण हो रही है, भू-क्षरण, मिट्टी-कटाव, बाढ़, अकाल आदि की विभीषिका बढ़ रही है, बंजर-क्षेत्र

तथा रेगिस्तान फैलते जा रहे हैं जिससे भविष्य की सुरक्षा तथा सुख-शांति पर प्रश्न-चिन्ह लगने लगा है।

पर्यावरण प्रदूषण मनुष्य द्वारा जाने-अनजाने स्वयं उत्पन्न की गई समस्या है। तीव्र औद्योगीकरण, वनों के उन्मुक्त कटाव, नदियों में कूड़े-कचरे का प्रवाह, कृषि में रसायनों का असंतुलित प्रयोग और निरंतर तेजी से बढ़ती जनसंख्या आदि पयर्जवरण को बिगाड़ने के लिए जिम्मेदार हैं। पर्यावरण से खिलवाड़ करके मनुष्य स्वयं अपना सर्वनाश कर रहा है। पर्यावरण प्रदूषण से मनुष्य ही नहीं अपितु सभी जीव-जंतुओं का जीवन अभिशाप बन जाएगा और आने वाली पीढ़ियां अपने पूर्वजों को कोसती रहेंगी। पर्यावरण प्रदूषण का क्षेत्र निरंतर बढ़ता जा रहा है। यों तो प्रदूषण संपूर्ण वायुमंडल को प्रभावित करता है, फिर भी शहरी क्षेत्रों में इसका प्रभाव अधिक रहता है। अब पर्यावरण प्रदूषण के कदम गांवों की ओर भी बढ़ रहे हैं। पर्यावरण मुख्यतः पांच रूपों में प्रदूषित होता है : (1) वायु प्रदूषण (2) जल प्रदूषण (3) ध्वनि प्रदूषण (4) थल अथवा मृदा प्रदूषण (5) रेडियोधर्मी अथवा ताप प्रदूषण।

वायु प्रदूषण

वायु प्रदूषण एक गंभीर समस्या है। इससे मानव जाति तथा अन्य प्राणियों के लिए खतरा पैदा होता है। कल-कारखानों से छोड़े गये धुंएं और धूल के कणों तथा नाना प्रकार की गैसों और सड़कों पर दौड़ते मोटर-वाहनों के धुंएं से वायुमंडल तेजी से प्रदूषित हो रहा है।

एक वैज्ञानिक रिपोर्ट के अनुसार वायुमंडल में विषाक्त रासायनिक पदार्थ, गैसों के रूप में इतनी तेजी से छोड़े जा रहे हैं कि उनके प्रभावों का विश्लेषण कर पाना असंभव होता जा रहा है। वायुमंडल में फैली विषाक्त हवाएं दूर जाकर वर्षा के साथ धरती पर बरस कर कृषि, वनस्पति और वनों को क्षति पहुंचाती हैं। अनेक देशों में हो रही तेजाबी वर्षा इसी वायु प्रदूषण का परिणाम है। मानव इतिहास में वायु प्रदूषण से हुई मौतों का एक उदाहरण 1952 में लंदन के ब्लैक फाग (काला कोहरा) में सल्फर-डाई-आक्साइड के कारण लगभग 4,000 व्यक्ति मौत की नींद सो गये थे।

वायु प्रदूषण मानव स्वास्थ्य के लिए अत्यंत हानिकारक है। वायु में मिश्रित धूल-धुंआं और विषाक्त गैसें अनेक बीमारियां जैसे—खांसी, दमा, इफाइमा, सिलिकोसिस, तपेदिक यहां तक कि कैंसर भी पैदा करती हैं। हवा में घुले सल्फर-डाई-आक्साइड, हाइड्रोकार्बन तथा नाइट्रोजन के आक्साइड आंखों, त्वचा, फेफड़ों आदि को नुकसान पहुंचाते हैं तथा कई बार मौत के कारण भी बन जाते हैं।

जल प्रदूषण

वायु और जल पृथ्वी पर जीवन के अस्तित्व के लिए नितांत आवश्यक हैं। पृथ्वी का तीन-चौथाई भाग पानी से आच्छादित है, लेकिन मात्र 0.3 प्रतिशत जल ही पीने योग्य है जबकि मीठे पानी की वार्षिक आवश्यकता निरंतर बढ़ रही है।

विभिन्न उद्योगों से उत्सर्जित हानिकारक व्यर्थ पदार्थ, घरेलू मल और कचरा, कृषि में प्रयुक्त रासायनिक उर्वरक तथा कीटनाशक आदि के कारण जल प्रदूषण की समस्या भयंकर होती जा रही है। प्रदूषणकारी उद्योगों में खाद उद्योग, कागज उद्योग, शराब उद्योग आदि प्रमुख हैं। वैज्ञानिकों के अनुसार भारत में 70 प्रतिशत जल प्रदूषित है। बहुत-सा कचरा और औद्योगिक अवशिष्ट पदार्थ बिना उपचार के ही नदियों में बहा दिए जाते हैं।

प्रदूषित जल को शुद्ध करके पीने योग्य बनाने के बाद भी उसमें अनेक हानिकारक तत्व विद्यमान रहते हैं। जल प्रदूषण से हृदय, गुर्दे, हड्डियों, दांत, फेफड़ों, आंखों आदि से संबंधित अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। जल में उपस्थित कार्बनिक व अकार्बनिक पदार्थ उसकी कठोरता को बढ़ाकर उसे हानिकारक बनाते हैं। मैग्निशियम सल्फेट आंतों में जलन पैदा करता है। फ्लोराइड से हड्डियों और दांतों का क्षय होता है। पानी में मिश्रित भारी धातु तत्व जैसे कैडमियम, लैड, पारा आदि शरीर में विषैले प्रभाव डालते हैं। इनसे जोड़ों में दर्द, गुर्दे, हृदय और नाड़ी तंत्र में विकार उत्पन्न होते हैं। इसी प्रकार अन्य जल प्रदूषक भी वायु प्रदूषकों की भांति अनजाने ही लोगों को बीमारियों से ग्रसित कर देते हैं।

ध्वनि प्रदूषण

बढ़ते हुए शहरीकरण तथा औद्योगीकरण के साथ शोर की समस्या भी बढ़ती जा रही है। मोटर-वाहनों, कल-कारखानों आदि का तीव्र शोर पर्यावरण को अपने कंपनों द्वारा प्रदूषित करता है जिससे मनुष्य की श्रवण-शक्ति पर ही प्रभाव नहीं पड़ता है वरन् उसे मानसिक और मनोवैज्ञानिक विकारों का भी सामना करना पड़ता है। शोर से हृदय और मस्तिष्क कमजोर होते हैं। शोर से अनिद्रा, सिर दर्द, तनाव, कुंठा, चिड़चिड़ाहट और झुंझलाहट बढ़ती है। प्रायः शोर की अधिकता बहरेपन का भी कारण बन जाती है। शोर के कारण श्वसन गति, रक्त चाप और नाड़ी गति में परिवर्तन आ जाने से स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है। शोर, पाचन विकार को भी जन्म देता है। शोर,

रोगियों के लिए अत्यंत कष्टकारक सिद्ध होता है। इससे उन्हें स्वास्थ्य लाभ में देर लगती है। अधिक शोर गर्भस्थ जीव को भी क्षति पहुंचाता है।

शोर, मनुष्य और जीव-जंतुओं पर ही दुष्प्रभाव नहीं डालता बल्कि पेड़-पौधों, इमारतों तथा प्राकृतिक संपदा को भी हानि पहुंचाता है। अमरीका के सुपर-सोनिक जेट विमान से उठने वाली तरंगें केन्योक की प्राचीन गुफाओं में दरारें पैदा कर चुकी हैं। जैट विमानों के भारी शोर के कारण हृदयरोगियों का जीवन संकट में पड़ जाता है।

रेडियोधर्मी अथवा ताप प्रदूषण

आज मनुष्य 21वीं सदी में प्रवेश करने जा रहा है। वह जीवन को सुखी, संपन्न और सुविधाओं से परिपूर्ण बनाने से भी आगे प्रकृति पर विजय पाने और दुनिया को जीत लेने की चाह में नित नये प्रयोग और आविष्कार कर रहा है। इस निहित स्वार्थ की दौड़ में वह संपूर्ण प्राणिजगत के हितों को नजरअंदाज कर रहा है। इसी का परिणाम है कि सारी पृथ्वी को अणु, परमाणु, हाइड्रोजन बमों के परीक्षणों, नाभिकीय संस्थानों, रेडियोधर्मी अवशिष्ट पदार्थों और रेडियो आइसोटोप्स आदि से होने वाले विकिरण के भयंकर प्रदूषण से ग्रसित होना पड़ रहा है। रेडियोधर्मी विकिरण न तो दिखाई देता है और न ही इसमें किसी प्रकार की गंध होती है। किंतु शरीर पर इसका घातक प्रभाव तुरंत पड़ने लगता है। कैंसर, बांझपन, अपंगता इसके भयानक अभिशाप हैं। रेडियोधर्मी प्रदूषण से त्वचा जल जाती है। यह प्रदूषण वनस्पति को समूल नष्ट कर देता है। दूसरे महायुद्ध में अमरीका द्वारा जापान के हिरोशिमा और नागासाकी शहरों पर परमाणु बम विस्फोट इसके ज्वलंत उदाहरण हैं।

परमाणु ऊर्जा विकसित करने वाले नाभिकीय संस्थानों की बढ़ती हुई संख्या के साथ रिसने वाले रेडियोधर्मी विकिरण की संभावना भी निरंतर बढ़ रही है। इनके लगातार विकिरण से पर्यावरण अधिक प्रदूषित होता जायेगा। वैज्ञानिकों का मत है कि संपूर्ण मानव-जाति के कल्याण को दृष्टिगत रखते हुए समय रहते इस पर नियंत्रण के लिए प्रभावी कदम नहीं उठाए गए तो इस प्रदूषण के आत्मघाती परिणाम होंगे।

थल अथवा मृदा प्रदूषण

वायु और जल के प्रदूषण के अलावा कृषि में रासायनिक उर्वरकों और कीटनाशकों के असंतुलित प्रयोग के कारण भूमि की सतह अत्यधिक प्रदूषित हो गयी है। इस कारण भूमि से पैदा होने वाले अनाज और फल-सब्जियों पर भी प्रदूषण का असर दिखाई दे रहा है। भोजन के माध्यम से इन खतरनाक रसायनों और कीटनाशकों के हानिकारक तत्व मानव-शरीर में पहुंच कर नाना प्रकार की बीमारियां उत्पन्न कर रहे हैं। अप्रैल 1973 में अमरीकी केमिकल सोसाइटी ने कीटनाशक दवाओं के दूरगामी खतरों के बारे में आगाह कर दिया था कि कीटनाशक पदार्थ फसलों में शेष रहकर उन जीवों को नुकसान पहुंचा सकते हैं जो भोजन के रूप में इन्हें इस्तेमाल करते हैं। कृषि रसायनों के अत्यधिक प्रयोग से पर्यावरण संतुलन का भी खतरा बढ़ रहा है। कीटनाशकों के घातक परिणामों के बाद भी भारत में इनका प्रयोग लगातार बढ़ रहा है जो भयानक दुष्परिणामों की ओर इंगित करता है।

आर्थिक विकास पर प्रभाव

आज पर्यावरण प्रदूषण से पूरा विश्व परेशान है। ज्यों-ज्यों प्रगति और विकास हो रहा है, प्रदूषण बढ़ रहा है। इस प्रदूषण के भविष्य में कितने भयंकर परिणाम होंगे, इनका अनुमान अभी से लगाना तो संभव नहीं है लेकिन यह अवश्य है कि वे परिणाम जन-जीवन के लिए अवश्य ही खतरनाक होंगे। परमाणु अस्त्रों का निर्माण असीमित मात्रा में हो रहा है। इनके कुछ परिणाम तो हम देख ही चुके हैं। वायुमंडल का तापमान लगातार बढ़ रहा है जो भविष्य में प्रलय की आशंका उपस्थित करता है।

आज जन-मानस के मस्तिष्क में प्रकृति और विकास से संबंधित प्रश्नों का उठना स्वाभाविक है। जैसे—क्या प्रकृति और विकास एक-दूसरे के विरोधी हैं? क्या हम पर्यावरण की रक्षा के लिए विकास की राह पर चलना छोड़ दें अथवा ऐसे कौन-से उपाय हैं जिनसे प्रकृति और विकास में संतुलन स्थापित किया जा सकता है?

निष्कर्ष

निष्कर्ष के तौर पर कहा जा सकता है कि मानव को अपने विकास के साथ-साथ कोई ऐसा रास्ता निकालना चाहिए जिससे पर्यावरण पर कम-से-कम दुष्प्रभाव पड़े। यदि आज नाभिकीय अस्त्रों के उत्पादन और प्रयोग, वनों की कटाई, बढ़ते हुए शोर-शराबे तथा पेट्रोलियम पदार्थों से चालित यंत्रों पर नियंत्रण रखा जाए तो कुछ सीमा तक पर्यावरण प्रदूषण को रोका जा सकता है। पेट्रोलियम पदार्थ के स्थान पर सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा जैसे ऊर्जा के ऐसे स्रोतों का पता लगाना चाहिए जिसमें पर्यावरण पर किसी भी प्रकार का प्रतिकूल प्रभाव न पड़े। यदि समय रहते मनुष्य पर्यावरण के प्रति सजग नहीं हुआ, तो आने वाली पीढ़ियां अपने पूर्वजों को कभी माफ नहीं करेंगी। □

निर्धनता दूर करने में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की भूमिका

बी. बी. मंसूरी*

भारत की लगभग दो-तिहाई जनसंख्या गांवों में निवास करती है। यहां गरीबी एक मुख्य समस्या है। हमारे देश में गरीबी का आकलन पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा का उपभोग न कर पाने की क्षमता के साथ-साथ आय के अनुसार भी किया जाता है। इस आकलन के अनुसार उस व्यक्ति को निर्धनता की रेखा से नीचे माना जाता है जो ग्रामीण क्षेत्रों में प्रतिदिन 2,400 कैलोरी भोजन प्राप्त करने में असमर्थ है या जिसकी वार्षिक आय 11,000 रुपये से कम है। नवीनतम आकलन के अनुसार वर्ष 1993-94 में 21.68 प्रतिशत जनसंख्या ग्रामीण क्षेत्रों में गरीबी की रेखा से नीचे थी। योजना-काल के प्रारम्भ से ही सरकार ने ग्रामीण निर्धनता उन्मूलन के लिए समय-समय पर अनेक कार्यक्रम चलाए। इन्हीं गरीबी उन्मूलन कार्यक्रमों में एक मुख्य कार्यक्रम है, 'समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम'।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम प्रायोगिक तौर पर वर्ष 1978-79 में प्रारंभ किया गया था। 2 अक्तूबर 1980 से इसे ग्रामीण विकास के क्षेत्र में एक प्रमुख गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम के रूप में पूरे देश में लागू किया गया। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का उद्देश्य पता लगाए गए ग्रामीण गरीब परिवारों को गरीबी की रेखा से ऊपर लाने के समर्थ बनाना है। इस उद्देश्य को लक्षित समूहों को वित्तीय सहायता के माध्यम से उत्पादक परिसम्पत्तियां उपलब्ध कराई जाती हैं। यह वित्तीय सहायता सरकार द्वारा दी गई सब्सिडी तथा वित्तीय संस्थाओं द्वारा दिए गए सावधि ऋणों के रूप में होती है। यह सहायता केन्द्र और राज्यों द्वारा 50:50 के अनुपात में दी जाती है। इस योजना के अन्तर्गत केन्द्र द्वारा प्रदान की जाने वाली वित्तीय सहायता सीधे जिला ग्रामीण विकास एजेन्सी को जाती है।

लक्षित समूह

लक्षित समूह में लघु तथा सीमान्त किसान, कृषि मजदूर तथा ग्रामीण कारीगर शामिल हैं। वर्तमान में गरीबी की रेखा 11,000 रुपये की वार्षिक आय पर निर्धारित की गई है, परन्तु इस कार्यक्रम के अन्तर्गत उन ग्रामीण परिवारों को सहायता देने का लक्ष्य है जिनकी वार्षिक पारिवारिक आय 8,500 रुपये से कम है। इससे पहले 6,000 रुपये तक की वार्षिक आय वाले परिवारों को मदद दी जाती थी जिसे अप्रैल 1994 में बदल कर 1991-92 की कीमतों के आधार पर 11,000 रुपये को मान्यता प्रदान की गई।

इस कार्यक्रम के तहत लाभान्वित होने वाले परिवारों में कम-से-कम 50 प्रतिशत परिवार अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के, 40 प्रतिशत महिलाएं तथा 3 प्रतिशत शारीरिक रूप से विकलांग होने चाहिए। सहायता देने में फालतू भूमि के आबंटियों, परिवार कल्याण कार्यक्रम के ग्रीन कार्ड धारकों के परिवारों तथा मुक्त बंधुआ मजदूरों को भी प्राथमिकता दी जाती है। आठवीं योजना में इस कार्यक्रम के लिए केन्द्र तथा राज्यों का कुल व्यय लगभग 6,650 करोड़ रुपये प्रस्तावित किया गया था और लक्ष्य 126 लाख परिवारों को सहायता पहुंचाना था। इस कार्यक्रम के तहत केन्द्र सरकार ने 1996-97 के लिए 1,097 करोड़ रुपये की राशि आबंटित की।

सब्सिडी

सब्सिडी की पद्धति के अनुसार छोटे किसानों को 25 प्रतिशत; सीमान्त किसानों, कृषि मजदूरों तथा ग्रामीण कारीगरों के लिए 33.3 प्रतिशत और अनुसूचित जाति/जनजाति के लाभार्थियों तथा

*सदस्य, वाणिज्य संकाय, सी.एम. कालेज, दरभंगा (बिहार)

तालिका

आठवीं योजना के दौरान समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अंतर्गत वास्तविक तथा वित्तीय प्रगति

वास्तविक प्रगति (लाख परिवार)

वर्ष	लक्ष्य	उपलब्धि	उपलब्धि का प्रतिशत	अनु. जा./ अनु. जन-जाति की कवरेज	अनु. जाति/ अनु. जन-जाति का प्रतिशत	महिलाओं की कवरेज	महिलाओं का प्रतिशत
1992-93	18.75	20.69	110.33	10.64	51.41	6.91	33.39
1993-94	25.70	25.39	98.81	13.46	53.03	8.54	33.64
1994-95	21.15	22.15	104.96	11.03	49.80	7.51	33.90
1995-96		20.90		10.13	48.47	6.99	33.44
1996-97		7.91		3.57	45.14	2.62	33.12
(नवम्बर, 96 तक)							
		97.04		48.83		32.57	

स्रोत : ग्रामीण क्षेत्र और रोज़गार मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्ट, 1996-97

शारीरिक रूप से विकलांगों के लिए 50 प्रतिशत सब्सिडी दी जाती है। अनुसूचित जाति/जनजाति के परिवारों तथा शारीरिक रूप से विकलांगों के लिए सब्सिडी की सीमा 6,000 रुपये है। अन्य लाभार्थियों के लिए यह सीमा सामान्य क्षेत्रों में 4,000 रुपये तथा सूखाग्रस्त क्षेत्र कार्यक्रम, मरुभूमि विकास कार्यक्रम वाले क्षेत्रों में 5,000 रुपये है। समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम के सभी लाभार्थियों के लिए सामूहिक बीमा योजना लागू की गई है, जिसका खर्च सरकार द्वारा वहन किया जाता है।

एक जनवरी 1996 से समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम का पुनर्गठन किया गया है जिसके तहत एक नई रोजगार योजना प्रारम्भ की गई है। गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले कम-से-कम आठवीं कक्षा पास या फेल ग्रामीण युवकों को स्वरोजगार हेतु 50 प्रतिशत सब्सिडी दी जाएगी, जिसकी अधिकतम सीमा 7,500 रुपये होगी। गरीबी की रेखा से नीचे रहने वाले पांच या अधिक ग्रामीण युवक यदि संयुक्त रूप से कोई कारोबार करना चाहें, तो उन्हें भी 50 प्रतिशत सब्सिडी दी जाएगी जिसकी अधिकतम सीमा 1.25 लाख रुपये तक होगी।

समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम की उपलब्धियां

इस कार्यक्रम का कार्यान्वयन जिला ग्रामीण विकास एजेंसियों के माध्यम से किया जाता है। इसकी प्रगति को तालिका में प्रदर्शित किया गया है।

वर्ष 1993-94 में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत जिन 26.90 लाख परिवारों को सहायता दी गयी, उनमें से 48.47 प्रतिशत अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के थे। लाभार्थियों में 1995-96 के दौरान महिलाओं का प्रतिशत 33.44 प्रतिशत था। स्पष्ट है कि इस दिशा में समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है और सरकार ने भी इस कार्यक्रम के माध्यम से निर्धन ग्रामीणों को आर्थिक सहायता तथा संरक्षण देकर देश के विकास की मुख्य धारा से जोड़ने में आशातीत सफलता प्राप्त की है। □

पाठकों के विचार

इस पत्रिका में 'पाठकों के विचार' स्तंभ में पाठकगण ग्रामीण विकास के विभिन्न पहलुओं पर अथवा इस पत्रिका में प्रकाशित लेखों पर अपने विचार भेज सकते हैं। ये विचार दो सौ शब्दों से अधिक के न हों और सम्पादक, कुरुक्षेत्र, कृषि भवन, नई दिल्ली-110001 के पते पर भेजे जाएं।

इसके लिए कोई पारिश्रमिक देय नहीं होगा परंतु उन पाठकों की पत्रिका की एक प्रति भेजी जाएगी जिनके विचार इस स्तंभ में प्रकाशित होंगे।

–सम्पादक

कठोर जल और मानव स्वास्थ्य

डा. हिमांशु शेखर*

जल हमारे पर्यावरण का एक महत्वपूर्ण घटक है। इसकी उपस्थिति तथा प्रचुरता ने पृथ्वी को सौर मण्डल के ग्रहों में विशिष्ट स्थान प्रदान किया है। जल के कारण ही पृथ्वी पर विभिन्न प्रकार के जीव, वनस्पति तथा मनुष्यों का विकास और वृद्धि हो पाई है। उत्तरी गोलार्द्ध के 61 प्रतिशत, दक्षिण गोलार्द्ध के 81 प्रतिशत तथा पृथ्वी के सम्पूर्ण क्षेत्रफल के 71 प्रतिशत भाग में जल का विस्तार है। पृथ्वी की कुल जल राशि का आयतन 1.4×10^9 घन कि.मी. आंका गया है जिसमें सम्पूर्ण जल का 97 प्रतिशत भाग महासागरों में है जो लवणीय तथा अत्यंत खारा है। 1.8 प्रतिशत भाग ध्रुव प्रदेशों में बर्फ की चादरों के रूप में जमा है। शेष 1.2 प्रतिशत भाग जल का अधिकतर हिस्सा भूमिगत जल तथा कुछ वायुमण्डल में रहता है। केवल 0.6 प्रतिशत जल ही सतही जल स्रोतों (नदी, झील, झरना, तालाब आदि) के रूप में मिलता है। इस प्रकार हमारे उपयोग के लिए बहुत थोड़ा जल उपलब्ध है। दुर्भाग्य है कि आज के भौतिक युग में विभिन्न प्रकार की मानवीय प्रक्रियाओं द्वारा इन थोड़े से जल स्रोतों का जल भी प्रदूषित हो रहा है। यदि मानव द्वारा होने वाले जल प्रदूषण को नजरअंदाज कर दें, तो भी प्राकृतिक सम्पदा के उचित प्रबंधन के अभाव में जल प्रदूषित हो रहा है। प्राकृतिक जल चूंकि चट्टानों, मिट्टियों आदि के ऊपर बहता हुआ गुजरता है जिसमें भू-क्षरण के कारण अनेक अवयव, पौधों की पत्तियां, जीवधारियों के अपघटन के तत्व, प्राणियों के मल-मूत्र तथा अनेक गैसें घुली रहती हैं, जो जल को प्रदूषित करती हैं। कुंआं, तालाब, झरने आदि का जल जिन स्थानों से होता हुआ आता है, जल में उस खनिज की प्रधानता होती है। कुछ धातुओं की मात्रा अनुकूलतम सान्द्रता से अधिक होने पर हानिकारक हो जाती है। आर्सेनिक, सीसा, कैडमियम और पारा इनके उदाहरण हैं, जो विषैले पदार्थ कहलाते हैं। निकल, बेरियम, बेरेल्यिम कोबाल्ट, वेनेडियम, टिन इत्यादि धातुएं भी विषैली प्रकृति की होती हैं। अनेक खनिज तथा धातुएं वर्षा काल में विवृत खदानों से खनन के पश्चात जल के साथ बहकर उसे प्रदूषित करती हैं।

*प्रवक्ता, रसायन विभाग, महात्मा गांधी ग्रामोदय विश्वविद्यालय, चित्रकूट, सतना (म. प्र.)

जल की कठोरता के कारण

प्रकृति में सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, मैग्निशियम, लोहा, जस्ता आदि खनिजों की अधिकता होने के कारण सोते, कुंएं, जलपंप, नलकूप आदि के जल में इन तत्वों के लवण घुले रहते हैं जो जल को स्वादयुक्त बनाये रखते हैं। कैल्शियम, मैग्निशयम, बाय-कार्बोनेट, सल्फेट, क्लोराइड की मात्रा अधिक होने पर जल कठोर हो जाता है तथा उसमें साबुन की झाग नहीं बनती है। कभी-कभी फ्लोराइड, नाइट्रेट भी जल की कठोरता के कारण होते हैं। सामान्य जल में क्लोराइड की मात्रा 200 मिलीग्राम प्रति लीटर होती है। परंतु, यदि मात्रा 200-1000 मि.ग्रा. प्रति लीटर हो तो जल क्षारीय तथा इससे ज्यादा होने पर नमकीन कहलाता है। जल की कठोरता सामान्यतया जल में कैल्शियम कार्बोनेट के मि.ग्रा. प्रति लीटर या पी.पी.एम. के रूप में व्यक्त की जाती है। जल में कैल्शियम कार्बोनेट की मात्रा 50-100 मि.ग्रा. प्रति लीटर हो, तो उसे मृदु जल कहते हैं। 100-150 मि.ग्रा. प्रति लीटर साधारण श्रेणी की कठोरता कहलाती है। इससे अधिक होने पर कठोरता का निष्कासन आवश्यक हो जाता है। वैज्ञानिक इ. एल. वेन ने अपने शोध-पत्र में 500 पी.पी.एम. कैल्शियम कार्बोनेट वाले जल को स्वास्थ्य की दृष्टि से ठीक बताया।

कठोर जल के उपयोग से आर्थिक क्षति होती है तथा स्वास्थ्य की दृष्टि से भी यह हानिकारक होता है। सफाई के दौरान कठोर जल से झाग उत्पन्न करने में साबुन की अधिक मात्रा की खपत होती है तथा अवक्षेपित अवशिष्ट से पोशाक के सूत नष्ट होने की सम्भावना बनी रहती है। एक आकलन के अनुसार मध्यम श्रेणी से अधिक कठोर जल में प्रत्येक एक पी.पी.एम. की कठोरता पर लगभग 25 पी.पी.एम. साबुन की अतिरिक्त मात्रा खर्च होती है। उद्योगों में कठोर जल के कारण अनेक परेशानियां होती हैं। उदाहरणार्थ, किसी कारखाने में वाष्पित्र में कठोर जल गर्म करने पर उसकी भीतरी सतह पर एक परत जम जाती है जिससे वाष्प बनने में अधिक ईंधन खर्च होती है, वाष्पित्र की धातु अधिक गर्म हो जाती है और संयंत्र के टूटने का खतरा बना रहता है। जलकल में कठोर जल लम्बे समय तक प्रवाहित करने से उसके अन्दर के लवणों के अवक्षेप नल में जल

प्रवाह की गति को अवरोधित कर देते हैं। कठोर जल कपड़ा निर्माण की प्रक्रिया, रंगाई प्रक्रिया, पेपर निर्माण, बर्फ निर्माण, रेयान उद्योग आदि में बाधा पहुंचाता है। यदि जल में लौह और मैगनीज़ के लवण घुले हों तो जल के साथ यह रंगीन हाइड्रोक्साइड बनाता है जिससे इसका रंग धुंधला हो जाता है। जल में सल्फेट आयन की अधिकता धातुओं का क्षरण करती है।

जल कठोरता मुख्यतया दो प्रकार की होती है—अस्थायी तथा स्थायी। अस्थायी कठोरता जल में कैल्शियम और मैग्निशियम के बायकार्बोनेट की अधिकता के कारण होती है। इसे गर्म करने पर घुलनशील बायकार्बोनेट अघुलनशील कार्बोनेट में परिवर्तित हो जाता है जिसे ज्यादा हिलाए-डुलाए बिना अलग कर लेते हैं। इस कठोरता को चूने का प्रयोग करके भी दूर कर सकते हैं। स्थायी कठोरता जल में कैल्शियम और मैग्निशियम के क्लोराइड तथा सल्फेट की अधिकता के कारण होती है। इसे मुख्यतया सोडा-सार, कास्टिक सोडा, परम्युटिट विधि, कैल्गिन प्रक्रम तथा डायटमी मृत्तिका द्वारा दूर करते हैं।

स्वास्थ्य पर प्रभाव

स्वास्थ्य की दृष्टि से कठोर जल अनुकूल नहीं होता है। जल में प्राकृतिक रूप से ही अनेक रासायनिक अपद्रव्य उपस्थित रहते हैं। हर अपद्रव्य में एक सीमा से अधिक होने पर स्वास्थ्य पर विपरीत असर डालता है। स्वस्थ दांतों के लिए फ्लोराइड बहुत आवश्यक है किन्तु जल में इसकी मात्रा एक पी.पी.एम. से अधिक होने पर दांतों को यह कुवंरित रूप प्रदान करता है। इसी प्रकार जल में फेरस बायकार्बोनेट का विलय होने से लोहा, बदहजमी तथा कोष्टबद्धता उत्पन्न करता है। नाइट्रेट अधिक मात्रा में शरीर में पहुंचकर नाईट्राइस में परिवर्तित होता है, जो रक्त के हीमोग्लोबिन से संयोग कर रक्त की आक्सीजन वहन करने की क्षमता में कमी लाता है। इससे छोटे बच्चों की मृत्यु तक हो जाती है। सीसायुक्त जल को लम्बे समय तक लेने से अनेक रोग हो जाते हैं।

कैल्शियम तथा पथरी रोग

जल में कैल्शियम की अधिक मात्रा पथरी बनाने में सहायक होती है। कैल्शियम आक्सलेट के रूप में हो या फास्फेट के रूप में या किसी रोगी के लम्बे समय तक बिस्तर पर रहने से उनकी अस्थियां चिकैल्शीकृत होने लगती हैं। इन सभी स्थितियों में मनुष्य के मूत्र में कैल्शियम की मात्रा बढ़ जाती है और यह पथरी का निर्माण करता है। ऐसे क्षेत्रों में जहां जल में कैल्शियम की अधिकता हो, ऐसे गर्म देशों में जहां के लोगों को पानी पूरी तरह पच नहीं पाता और शरीर में पानी की कमी बनी रहती है, मूत्र सान्द्रित होकर जमने लगता है। इसमें म्यूकोप्रोटीन की मात्रा अधिक हो जाती है। यह कैल्शियम से संयोग कर अघुलनशील पथरी बना देता है। ये पथरियां कैल्शियम के अलावा पोटेशियम तथा अमोनियम के फास्फेट, कोलेस्ट्रोल तथा यूरिक अम्ल की अधिकता के कारण भी होती हैं। स्ट्रेप्टोकाक्स एवं स्टेफाइलोकाक्स जैसे रोगाणु मूत्र में उपस्थित यूरिया को तोड़कर यूरिक अम्ल में बदल देते हैं जिससे पथरी बनने की सम्भावना बढ़ जाती है। इन्हें मेटावालिक पथरियां कहते हैं जिसे 'गाउट' नामक रोग से जानते हैं। ये आकार में छोटे-छोटे बालू के कण या मटर के दाने के बराबर, कभी-कभी अण्डे के बराबर होती हैं तथा पूरे गुर्दे को भरने की भी क्षमता रखती हैं। ये पथरियां मूत्रनली, मूत्राशय, मूत्रथैली, यूरेटर, गुर्दे तथा पित्ताशय में विकसित होती हैं। पथरी के निर्माण से मूत्रनलिका में मूत्र गमन की क्रिया धीमी पड़ जाती है, जिससे मूत्र बूंद-बूंद कर आता है। मूत्राशय खाली न होने के कारण मूत्र त्याग की बार-बार इच्छा होती है, अधिक दबाव होने पर असहय पीड़ा होती है तथा मूत्र में रक्त आने लगता है जिसे हीमेटूरिया कहते हैं। पथरी जैसे-जैसे बढ़ती है, गुर्दे पर दबाव भी बढ़ने लगता है। फलस्वरूप गुर्दे कमजोर और क्षतिग्रस्त होने लगते हैं और यह शरीर में खून की सफाई नहीं कर पाते। अन्त में काम करना बन्द कर देते हैं जिससे रक्त दूषित हो जाता है और शरीर में जहर फैलने लगता है। फिर डायलेसिस मशीन ही रक्त की सफाई कर सकती है। कभी-कभी पित्ताशय में भी पथरी निर्मित होने लगती है। पित्त रस यकृत द्वारा निर्मित होकर पित्ताशय में जमा होता है तथा एक विशेष नली द्वारा बूंद-बूंद करके छोटी आंत में आता है। यह पित्त रस, तेल, वसा और चर्बी के छोटे-छोटे टुकड़ों को पचाता है। पथरी पित्ताशय और पित्त नलिका में गठित होने के कारण पित्तगमन का यथार्थ वेग अवरोधित हो जाता है जिससे पित्त जिगर में आना प्रारम्भ कर देता है और वहां से पूरे शरीर में फैल जाता है। फलस्वरूप मनुष्य पीलिया रोग से ग्रसित हो जाता है।

कठोर जल के सेवन से मानव संचालित कार्यों में जटिलता बढ़ती जाती है तथा इससे आर्थिक हानि होती है। साथ ही, स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। इस दिशा में अनेक तथ्यों को उजागर किया गया है, परंतु अभी और अधिक जानकारी वांछित है, जो हमें वैज्ञानिकों के सहयोग से प्राप्त हो सकती है। □

सस्ते और पौष्टिक सोया दूध से ग्रामीणों को रोजगार

डा. बृजनाथ सिंह

दूध मनुष्य का आहार है और लोकप्रिय पेय भी। गर्मी का मौसम आते ही गायें, भैंसे कम दूध देने लगती हैं। इस कारण दूध की किल्लत हो जाती है। इसी दौरान शादी-ब्याह भी प्रायः होते हैं। फिर व्यापारियों द्वारा दूध में मिलावट शुरू हो जाती है। जवाहरलाल नेहरू कृषि विश्वविद्यालय, जबलपुर के खाद्य विभाग के वैज्ञानिकों ने इस समस्या का समाधान ढूंढ निकाला है। वर्षों तक शोध के उपरान्त वैज्ञानिक इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि सोयाबीन से घर बैठे दूध बनाया जा सकता है और उसकी कीमत मात्र 5 रुपये प्रति लीटर होगी। भारत जैसे विकासशील देश में यह खोज वरदान साबित हो सकती है।

देश में मध्य प्रदेश 'सोयाबीन प्रदेश' के नाम से जाना जाता है। देश का 80 प्रतिशत सोयाबीन इस राज्य में पैदा होता है। सोयाबीन में 40 प्रतिशत प्रोटीन और 20 प्रतिशत वसा पाया जाता है। इसीलिये वैज्ञानिकों ने इसे दुग्ध निर्माण के लिये उपयुक्त पाया। मध्य प्रदेश में सोयाबीन मुख्य रूप से इन्दौर, उज्जैन और भोपाल में पैदा होता है। खरीफ के अलावा यह रबी के मौसम में भी पैदा होता है।

दुग्धोत्पादन के लिये यह आवश्यक है कि सोयाबीन स्वस्थ और पीला हो तथा तीन माह से ज्यादा समय से भंडारित न किया गया हो क्योंकि ज्यादा पुराने सोयाबीन से बने दूध में एक विशेष प्रकार की महक आती है। ऐसा 'लिपाक्सीजिनेज एञ्जाइम' की क्रिया के कारण होता है।

सोयाबीन से दूध बनाने के लिये सर्वप्रथम कम-से-कम 8 घण्टे तक भिगोया जाए। तदुपरान्त उसे हाथ से रगड़कर उसका छिलका पूरी तरह उतार लिया जाए। उसके बाद उसे सिलबट्टे या इलेक्ट्रिक ग्राइण्डर में बारीक पीसा जाए। फिर एक भाग पिसे सोयाबीन में 6 भाग गर्म पानी मिलाकर बारीक सूती कपड़े से छान लिया जाए। अन्ततः उसमें पिसी इलायची और शक्कर (चीनी) मिलाकर स्वादिष्ट बना लिया जाए। इसे बोतल में भरकर 15 दिन तक फ्रिज में सुरक्षित रखा जा सकता है। इस दूध को रंगीन भी बनाया जा सकता है। इससे पनीर, दही, आइस्क्रीम और खीर भी बनाये जा सकते हैं।

सोयाबीन का दूध गाय-भैंस के दूध के समतुल्य पौष्टिक होता है। मसलन गाय के 100 ग्राम दूध में 3.2 प्रतिशत प्रोटीन, 4 प्रतिशत वसा, 4.6 प्रतिशत कार्बोज, 0–11 प्रतिशत कैल्शियम और 0.07 प्रतिशत फास्फोरस पाया जाता है। वहीं सोया दूध में 4.2 प्रतिशत प्रोटीन, 2.4 प्रतिशत वसा, 3.2 प्रतिशत कार्बोज़, 0.08 प्रतिशत कैल्शियम और 0.10 प्रतिशत फास्फोरस पाया जाता है। इस प्रकार सोया दूध पौष्टिक और पूर्ण आहार है।

सोया दूध में लैक्टोस बिल्कुल नहीं होता जबकि प्राकृतिक दूध (गाय, भैंस और मां के दूध) में लैक्टोस पाया जाता है। अगर लैक्टोस इंटालरेंस की बीमारी से पीड़ित बच्चों को प्राकृतिक दूध दिया जाता है तो उन्हें दस्त लग जाते हैं। ऐसे बच्चों और डायबिटीज़ के मरीज़ों के लिये सोया दूध स्वास्थ्यवर्धक होता है।

आमतौर पर बाजार में गाय-भैंस का दूध 10 से 12 रुपये प्रति लीटर मिलता है। एक किलोग्राम सोयाबीन 8 से 10 रुपये में मिलती है। इस प्रकार एक किलोग्राम सोयाबीन से दो लीटर सोया दूध बनाया जा सकता है।

देश में दूध महंगा होने के कारण प्रायः निम्न वर्ग के लोग इससे वंचित रहते हैं और कुपोषण के कारण अनेक बीमारियों के शिकार हो जाते हैं। ऐसी परिस्थिति में गरीब श्रमिक थोड़ा-सा परिश्रम करके सोया दूध तैयार कर सकते हैं और कुपोषण से बच सकते हैं।

सोया दूध सस्ता जरूर है मगर उसमें यह कमी है कि वह प्राकृतिक दूध जैसा स्वादिष्ट नहीं होता। उसमें एक विशेष प्रकार की महक आती है, जिसके कारण रईसजादे इसे पसन्द नहीं करते। यह दरअसल 'गरीबों के लिए गोश्त' (Poormen's meat) है। इससे बना बिस्कुट और दही बहुत स्वादिष्ट होता है। बिस्कुट तो भारी पैमाने पर विदेशों में निर्यात भी किये जाते हैं। इससे ग्रामीणों को रोजगार भी मिल सकता है। □

भूलोक का अमृत : मट्ठा

डा. रामजीत शर्मा

मट्ठा या छाछ को भूलोक का अमृत कहा गया है। धार्मिक ग्रंथों में तो इसके गुणों के वर्णन में यहां तक कहा गया है कि यदि देव लोक में मट्ठा उपलब्ध होता तो देवराज इन्द्र का चेहरा भट्ठा न होता और कुबेर को कोढ़ से पीड़ित न होना पड़ता। यह स्वाद तथा गुणों में दूध से भी बढ़कर है। चरक संहिता में गाय के मट्ठे को बहुत गुणकारी तथा औषधीय गुणों से भरपूर बताया गया है। इसके नियमित सेवन से शरीर की रोग सहने की क्षमता में अभूतपूर्व वृद्धि होती है जिससे शरीर हमेशा निरोगी रहता है। कई रोगों को ठीक करने के लिए भी गाय के मट्ठे का सेवन किया जाता है। यदि चाय, काफी तथा शीतल पेयों की आदत छोड़कर हम घर का बना एक गिलास मट्ठा नियमित रूप से प्रयोग करें, तो यह निश्चित रूप से सस्ता पड़ेगा तथा स्वास्थ्य भी ठीक रहेगा।

दूध को औटाकर दही डालकर जमाया जाता है जिससे गोदधि मिलता है। दधि को बिलोकर उसमें से नवनीत निकाल लिया जाए तो मट्ठा बनता है जिसे तक्र या छाछ भी कहते हैं। गोदधि उत्तम, बल-कारक, स्वादिष्ट, रुचिकर, पाचक, स्निग्ध, पौष्टिक तथा वातनाशक है। सब प्रकार के दहियों में गोदधि अधिक गुणदायक है। यह स्वाद में कुछ कषाय तथा विषाक में अम्लीय होता है।

विविध प्रकार

वैसे तो भैंस तथा बकरी के दूध से भी मट्ठा बनाया जाता है किन्तु गौ के दूध के मट्ठे का स्वास्थ्य रक्षा में विशेष महत्व है। गो-तक्र त्रिदोषनाशक, पथ्यों में उत्तम, अजीर्णता दूर करने वाला, रुचिकर, बुद्धिवर्द्धक, अर्श (बवासीर) और उदर विकार नाशक है। यह कई रोगों में पथ्य आहार सिद्ध होता है। आयुर्वेद के अनुसार मट्ठा पांच तरह का होता है :

घोल : दही में पानी मिलाये बिना ज्यों का त्यों मलाई सहित मथने पर तैयार मट्ठे को घोल कहते हैं। इसमें बूरा अथवा चीनी डालक पीने पर पके मीठे आम के समान स्वादिष्ट तथा गुणकारी होता है

मथित : दही के ऊपर की मलाई हटाकर बिना पानी मिलाये मथने पर जो मट्ठा तैयार होता है, उसे मथित कहते हैं। ऐसा मट्ठा हल्का ग्राही, कसैला, खट्टा, पाक तथा रस में मधुर, पाचक, अग्नि बढ़ाने वाला, पोषक, उष्णतीय, वातनाशक और ग्रहणी रोगों के लिए सेवन योग्य है।

तक्र : दही में चौथाई भाग पानी मिलाकर मथने से तक्र तैयार होत है। इसे मट्ठा कहते हैं। यह सबसे गुणकारी तथा सेवन-योग्य है

उदश्वित : दही में आधा पानी मिलाकर मथने पर तैयार मट्ठा उदश्वित कहलाता है। यह कफकारी, बलवर्द्धक, वातनाशक होता है।

छाछ : दही को मथ कर मक्खन निकाल लिया जाए और पानी मिलाकर मथा जाए, तो छाछ बनती है। छाछ शीतल, हल्की पित्तनाशक, प्यास तथा वात को नष्ट करने वाली और कफ बढ़ाने वाली होती है। नमक डालकर पीने से पाचन शक्ति बढ़ती है।

उपयोग

गोदधि का उपयोग पंचामृत, पंचगव्य (दूध, दही, घी, गोबर, गोमूत्र) तथा गोषडंग (दूध, दही, घी, गोबर, गोमूत्र, गोरोचन) बनाने में किय जाता है। आयुर्वेदिक ग्रन्थों में इनके अनेक उपयोग निर्दिष्ट हैं। मट्ठ तथा गोदधि के कुछ औषधीय उपयोग इस प्रकार हैं :

लघु गंगाधर चूर्ण : नागरमौथा, इन्द्र जौ, बेल का गूदा, लोध्र, मोचरस तथा धाय के फूल इन छह द्रव्यों का चूर्ण बनाकर गोदधि के साथ गुड़ मिलाकर पीने से सभी प्रकार के दस्त तथा अतिसार में लाभ होत है।

अजमोदादि : अजमोदा, मोचरस, शुण्ठी, धाय का फूल इन चारों को पीसकर चूर्ण बनाकर गोदधि के साथ अच्छी तरह फेंटकर सेवन करने से पानी की धारा के समान अतिसार ठीक हो जाता है।

दस्त : गोदधि के साथ ईसबगोल लेने पर दस्तों में लाभ होता है

गैस, अर्श (बवासीर) : गरिष्ठ, बासी, अधिक तला तथा मसालेयुक्त आहार लेने से ये रोग उत्पन्न होते हैं। अर्श के लिए मट्ठे से सस्ती और अच्छी कोई औषधि नहीं है। मट्ठे में हींग, जीरा और सैंधा नमक डालकर पीने से उक्त रोगों में लाभ होता है। ऐसा मट्ठा रुचिकर पौष्टिक, बलवर्द्धक और वातशूल को नष्ट करता है।

पेशाब की रुकावट : गुर्दे, मूत्रवाहिनी नलिका, मूत्राशय तथा शिश्न में पत्थरी के कारण या सूजन आने पर पेशाब नहीं उतरता। इसके लिए मट्ठे को गुड़ के साथ पीने से पेशाब की रुकावट दूर हो जाती है।

पाण्डुरोग/पीलिया : प्रदूषित पानी तथा अन्य कारणों से उत्पन्न होने वाला रोग है जिसमें रोगी का शरीर पीला, निर्बल, निश्तेज तथा कान्तिहीन हो जाता है। मट्ठे में चित्रक (चीता) का चूर्ण डालकर सेवन करने से पीलिया रोग में लाभ मिलता है।

जठराग्नि : अमाशय के विकारों के कारण पाचन संबंधी रस (एन्जाइम) कम उत्पन्न होते हैं जिससे भूख कम लगती है, दिन भर अरुचि, जी मिचलाना, अपच, विषम ज्वर, कब्ज या अतिसार के लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं। ऐसे रोगी का पित्त तथा वात कुपित हो जाता है जिससे वह दिनोंदिन कमजोर होता जाता है तथा शीघ्र वृद्ध हो जाता है। शीतकाल में तक्र और ग्रीष्म काल में छाछ का सेवन प्रतिदिन करने से यह रोग हमेशा के लिए नष्ट हो जाता है।

ग्रहणी : ग्रहणी तथा संग्रहणी भयंकर रोग है। इसमें रोगी की पाचन-शक्ति कमजोर हो जाती है जिससे हमेशा दस्त रहते हैं, कभी-कभी मलाशय में दर्द के कारण मलाशय भ्रंश (कांच निकलना) भी हो जाता है। कुशल वैद्य ऐसा मानते हैं कि तक्र के बिना ग्रहणी की चिकित्सा ही नहीं है। मट्ठे में जीरा और सैंधा नमक मिलाकर प्रयोग करने से ग्रहणी रोग समाप्त हो जाता है।

अजीर्ण या अपच : यह सामान्यतया सभी को होने वाला रोग है। गाय के तक्र में चुटकी भर जीरा, 10 ग्राम काली मिर्च 10-12 ग्राम लाहौरी नमक डालकर उसे एक-एक घूंट करके चूस-चूसकर पीयें। मट्ठा सिर्फ दिन में ही पिया जाए। शाम के बाद मट्ठे का प्रयोग वर्जित है।

आंखों की जलन : धूल, धुंआ तथा गर्मी से आंखें लाल हो जाती हैं। दही की मलाई या मक्खन आंखों में लगाकर सो जाएं। पलकों पर इसके लेप से जलन समाप्त होती है। मट्ठा पीने वाले की आंखें सदा नीरोग रहती हैं।

आंतों के कीड़े : यह आजकल सामान्य बीमारी है। कृमिनाशन के लिए एक दिन पहले का मट्ठा पीयें। इससे आंतों के सभी कीड़े एक जगह इकट्ठे हो जायेंगे। फिर नमकीन मट्ठे का सेवन करने से उनका सफाया हो जायेगा।

एग्जीमा या छाजन : एग्जीमा ग्रस्त भाग पर नीम की पत्तियों (कोंपलें) को छाछ में पीसकर लेप करें। दिन में 2-3 बार लेप करें। ताजा दही या मट्ठा पीयें। उसमें नमक या शक्कर न मिलायें।

कब्ज : मट्ठा नियमित रूप से पीने वाले को कब्ज नहीं हो सकती। किसी व्यक्ति को कब्ज होने पर दो चुटकी अजवायन पीसकर मट्ठे में मिलाकर पीने से आराम मिलता है। बासी मट्ठे में नमक मिलाकर सेवन करने से कब्ज में लाभ होता है।

चेहरे की झाइयां : झाइयों वाले चेहरे पर एक दिन का गाय का बासी मट्ठा सुबह स्नान से पूर्व चेहरे पर लगाकर हल्की मालिश करें तथा दस मिनट बाद स्नान करें। कुछ ही दिनों में चेहरे की झाइयां मिट जायेंगी और चेहरा कान्तिपूर्ण हो जायेगा।

दाद : नीम की पांच पत्तियां, 2.5 ग्राम हल्दी, पांच दाने काली मिर्च और एक छोटी पीपल की छाल, छाछ में पीसकर लेप करें। कुछ ही दिनों में दाद गायब हो जायेगा।

अपथ्य : रात्रि में दही, मट्ठा नहीं खाना चाहिए। दही गर्म करके न खाएं। □

(पृष्ठ 32 का शेष) खादी ग्रामोद्योग स्कीमों का महत्व.....

परियोजनाएं शुरू कर सकता है।

(ख) पंजीकृत संस्थाएं/सहकारी समितियां 25 लाख तक की परियोजनाएं शुरू कर सकती हैं।

व्यक्तिगत उद्यमी/संस्था को कुल लागत का 10 प्रतिशत खर्च निजी स्रोत से वहन करना होगा जबकि अनुसूचित जनजाति, महिलाओं, भूतपूर्व सैनिकों और पहाड़ी सीमावर्ती क्षेत्र के आवेदकों को कुल लागत का केवल 5 प्रतिशत खर्च वहन करना होगा। आवेदकों के 10 लाख रुपये तक की परियोजना पर 10 प्रतिशत की दर से मार्जिन मनी स्वीकृत की जाएगी जो प्रारंभिक अवस्था में ब्याज-युक्त ऋण होगी परंतु उद्योग के एक निश्चित अवधि तक सफलतापूर्वक संचालन के उपरांत यह राशि अनुदान में बदल दी जाएगी।

स्थानीय बैंकों द्वारा स्वीकृत ग्रामोद्योग की परियोजनाओं के लिए मार्जिन मनी बैंकों को सीधे दी जाएगी। इसके लिए आवेदकों को आयोग के राज्य/क्षेत्रीय मंडल कार्यालयों के माध्यम से अपनी परियोजना स्थानीय बैंकों को भेजनी होंगी। इस स्कीम में वित्तीय सहायता बैंक ब्याज दर पर सुलभ है। ऋण वापसी 8 वर्षों की 28 तिमाही किश्तों में ब्याज सहित करनी होगी। खादी ग्रामोद्योग की परियोजनाएं अपनाकर हम अपने और दूसरे लोगों के लिये स्वरोजगार के द्वार खोल सकते हैं और आजादी की 50वीं वर्षगांठ के अवसर पर बापू के सपनों को साकार करने में अग्रसर हो सकते हैं। □

एम्प्लायमेंट न्यूज/रोजगार समाचार

देश में पांच लाख से ज्यादा लोगों को भरोसा है कि
एम्प्लायमेंट न्यूज/रोजगार समाचार
के जरिये उन्हें
रोजगार मिल सकता है
बेहतर रोजगार मिल सकता है
प्रतियोगी परीक्षाओं की तैयारी
के लिए नवीनतम जानकारी मिल सकती है

एम्प्लायमेंट न्यूज/रोजगार समाचार
प्रकाशन विभाग,
सूचना और प्रसारण मंत्रालय, भारत सरकार
द्वारा प्रकाशित किया जाता है

इसकी प्रति प्राप्त करने के लिए
अपने स्थानीय
समाचार विक्रेता से सम्पर्क कीजिए
अथवा
निम्न पते पर लिखिये :

सहायक सम्पादक (सर्कुलेशन), एम्प्लायमेंट न्यूज/रोजगार समाचार,
ईस्ट ब्लाक 4, लेवल-5, आर. के. पुरम, नई दिल्ली-110066, टेलीफोन : 6107405

भाई. एस. एस. एन. 0971-8451
र्व भुगतान के बिना डी. पी. एस. ओ. दिल्ली में डाक में डालने
की अनुमति (लाइसेंस) : यू (डी एन)-55

P&T Regd. No. D(DL) 12057/98
ISSN 0971-8451
Licenced under U (DN)-55
to post without pre-payment at DPSO, Delhi-54

श्रीमती सुनिन्दि कौर, निदेशक, प्रकाशन विभाग, पटियाला हाउस, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित और मुद्रित। मुद्रक : आकाशदीप प्रिंटर्स, 20 अंसारी रोड